"गृहलक्ष्मी"-ग्रन्थमाला सं० २७.

क्षमा

लेखक—
ठाकुर श्रीनाथ सिंह

"गृहलक्ष्मी"-ग्रन्थमाला सं० २७.

क्षमा

मनोरञ्जक और शिक्षाप्रद

सामाजिक उपन्यास
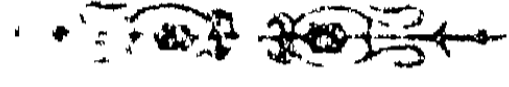
लेखक

ठाकुर श्रीनाथ सिंह

प्रकाशक

पं० सुदर्शनाचार्य्य बी० ए०

"गृहलक्ष्मी"–कार्य्यालय,

प्रयाग।

प्रथम संस्करण | सं० १९८२ वि० | मूल्य बारह आना

पुस्तक मिलने का पता—
मैनेजर, "गृहलक्ष्मी"-कार्य्यालय,
प्रयाग।

—:o:—

—:*:—

मुद्रक—
पं० सुदर्शनाचार्य्य बी० ए०,
सुदर्शन प्रेस,
प्रयाग।

भूमिका

'गृहलक्ष्मी' की सम्पादिका श्रीमती गोपालदेवी जी मुझसे प्रायः कहा करती थीं—"पति चाहे जो अपराध करे पत्नी उसे सदैव क्षमा कर देती है; किन्तु क्या पति में इतना बल नहीं होता कि वह भी पत्नी के अपराधों को क्षमा कर दिया करे?"

इसी बात को लेकर इस उपन्यास की रचना हुई है। इसमें यही दिखाया गया है कि पति अपनी स्त्री को कहाँ तक क्षमा कर सकता है?

यह उपन्यास श्रीमती गोपालदेवी जी स्वयं लिखने वाली थीं, पर वर्तमान स्त्री-समाज की बढ़ती हुई शारीरिक क्षीणता और बीमारियों के अध्ययन में वे इतनी मशगूल रहती हैं कि उन्हें बिल्कुल फुर्सत नहीं मिलती। अतएव इसके लिये उन्होंने मुझे आज्ञा दी।

इस उपन्यास का प्लाट (ढाँचा) भी उन्हीं का तैयार किया हुआ है। मैंने केवल पात्रों का नामकरण और स्थान इत्यादि का चुनाव किया है। भाव उनके हैं, शब्द मेरे।

यदि श्रीमती जी इसे स्वयं लिखतीं तो इसमें कुछ और ही बात होती। यह मैं कैसे कहूँ, कि उनके भाव मुझसे ठीक ही ठीक व्यक्त हुए हैं ? पर जिस प्रकार मखमल की या चिथड़ों की थैली का हीरों के मूल्य पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, उसी प्रकार—मुझे विश्वास है—मेरी साधारण शब्दावली का उनके उच्च विचारों पर अनुचित प्रभाव नहीं पड़ेगा।

मुझे यह स्वीकार करते हुए हर्ष होता है कि यदि इस उपन्यास-में कोई अच्छाई है तो उसका सम्पूर्ण श्रेय उक्त देवी जी को है और यदि कोई बुराई है तो उसका जिम्मेदार मैं हूं।

प्रयाग
३१. ८. १९२५ ई०

—श्रीनाथ सिंह।
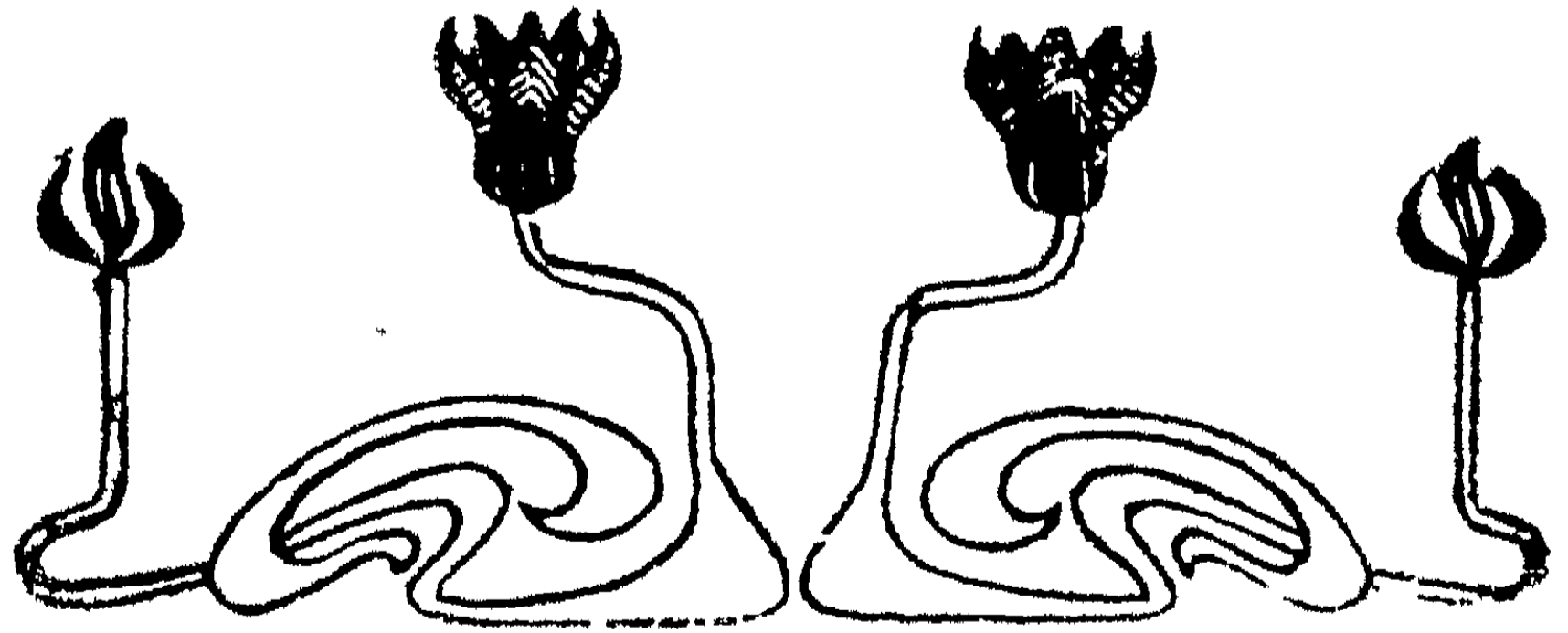
क्षमा

पहला परिच्छेद

"बेटी ! आज उधर मत जा।"

"क्यों अम्मा ! शंकर जी के लिये फूल कहाँ से आएँगे ?"

"बिना फूल के क्या शंकर की पूजा नहीं हो सकती ?"

"हो क्यों नहीं सकती।"

"फिर।"

"यह तो ठीक है, पर जब फूल आसानी से मिल सकते हैं तो लाने में हर्ज ही क्या है ?"

"हर्ज क्यों नहीं है। देख न ! कैसी भयानक घटा घिरी है। यह पानी क्या जल्दी निकलने वाला है ? और नाले के बढ़ जाने का तो डर अलग ही है।"

"नहीं अम्मा ! मैं अभी बात की बात में पानी बरसने के पहले ही वापस आ जाऊँगी।"

माता कुछ और कहने ही वाली थी कि लड़की दौड़ कर नाले के उस पार हो रही। "लड़की चतुर है, अभी चली आएगी संध्या होने में भी तो कुछ देर है," इत्यादि बातें मन ही मन

कहती हुई माता ऊपर की छत पर चली गई और बादलों की शोभा देखने लगी।

रतनमाला—जैसा कि अब हम उस लड़की को कहेंगे—नाले के उस पार जाकर पीछे की ओर देखने लगी। उसी समय बादल गरज उठे। अकेली रतनमाला कुछ भयभीत हुई। उसके हृदय में माता के उपरोक्त शब्द गूँज उठे—"कैसी भयानक घटा घिरी है। यह पानी क्या जल्दी निकलने वाला है?" उसने सोचा—घर लौट चलूँ नाला बढ़ जायगा तो वास्तव में बड़ी कठिनाई पड़ेगी। फिर सोचा अब आगई हूँ तो थोड़े से फूल लेती ही चलूँ। इतनी जल्दी नाला नहीं बढ़ जायगा। इसी उधेड़ बुन में वह बड़ी देर तक खड़ी रही। अन्त में फूल लेकर ही वापस जाना निश्चित हुआ। जिन शंकर जी के लिये वह रोज फूल तोड़ने आती है क्या वे उसकी इतनी भी सहायता न करेंगे कि थोड़ी देर तक पानी का बरसना रुका रहे। जरूर करेंगे। पर क्या वह शंकर जी के ही लिये फूल तोड़ने आती है? यह तो वही जाने। हाँ यह बात अवश्य है कि यदि शंकर जी न होते तब भी रतनामाला फूल तोड़ने आती। उसे फूल बहुत प्रिय हैं। वह फूलों की दो मालाएँ बनाती हैं। एक शंकर जी के लिये और दूसरी अपने लिये। इस पर भी वह पूजा समाप्त होते ही शंकर जी को बिना माला का कर देती है। और दोनों मालाएँ स्वयं पहन लेती है। इसी से ज्ञात होता है कि उसे शंकर जी का उतना ध्यान नहीं है जितना अपना। तो क्या शंकर जी इस बात को जानते हैं? सम्भव है जानते हों। पर इसके सिवाय कि पानी का बरसना न रोकें और क्या कर सकते हैं? रतनमाला को इसकी परवाह नहीं है। वह शंकर जी के बल पर फूल लेने नहीं जाती। उसे अपने ऊपर पूरा भरोसा है।

रतनमाला ने बड़े साहस के साथ बाग में प्रवेश किया। बाग में कोई नहीं था। चमेली खूब खिली थी। बात की बात में उसके अञ्चल की झोली भर गई।

जिस प्रकार एक एक फूल उसकी झोली में गिर रहे थे उसी प्रकार एक एक कर के सैकड़ों विचार उसके हृदय को स्पर्श कर रहे थे। उसने सोचा—यदि इस बाग का मालिक मुसलमान न होता, कोई पंडित होता और उसके साथ रतनमाला का विवाह होता, तो क्या होता? वह इस सारे बाग की मालकिन होती, फूलों की सेज पर सोती और फूलों ही की साड़ी पहनती। बाग के बीच में शंकर जी की मूर्ति होती जिसके चरणों में आस पास की चमेली की लचीली और पतली टहनियाँ हवा के झोंकों से हिल हिल कर अपनी नई नई कलियाँ चढ़ा देतीं। सचमुच बड़ा सुखमय समय होता। रतनमाला ने एक ठंडी साँस ली।

बाग का मालिक नूर मुहम्मद नित्य संध्या समय हवा खाने के लिये बाग में आता था। वह पचीस वर्ष का खासा युवक था। उसका सफेद कुरता और पैजामा दूर ही से चमक उठता था। उसके बालों की काट छाँट बड़ी हृदयहारिणी थी। था तो वह एक कट्टर मुसलमान पर मोंछ और दाढ़ी के सफाचट करवाने में उसने अपनी कट्टरता से काम नहीं लिया था। उसके गोरे और गोल चेहरे पर पान से रंगे होंठ बड़ी विचित्र शोभा पा रहे थे। चश्मे से बड़ी बड़ी आँखों की शोभा चौगुनी हो रही थी।

वह रतनमाला को पहचानता था और रतनमाला उसको पहचानती थी। दोनों को कभी आपस में बात करने का अवसर नहीं पड़ा था। दोनों की यह पहचान भी एक दूसरे को इसी बाग में नित्य देखने के कारण हुई थी। रतनमाला उसकी ओर

देख मन ही मन कहती—कैसा सुन्दर युवक है। पर थोड़ी ही देर में जब वह सोचती कि यह मुसलमान है तो उसका मुँह आप से आप दूसरी ओर फिर जाता। वह अपने को धिक्कारती और फिर उसकी ओर न देखने का प्रण करती। नूर मुहम्मद चाहे जहाँ रहता रतनमाला की ओर जरूर देखता रहता। उसकी समझ में रतनमाला भी एक फूल है जो नित्य संध्या समय उसके बाग की शोभा बढ़ा देता है। इस चलते फिरते फूल की इस बाग में कितनी आवश्यकता है—यह बात नूर मुहम्मद बराबर अनुभव कर रहा था। पर वह किसी से कुछ कहता सुनता न था।

नूर मुहम्मद के दिल में कई बार यह इच्छा हुई थी कि वह रतन माला से कुछ बात चीत करे। पर ज्योंही वह रतन माला की ओर जाने को होता त्योंही वह फूल संभाल कर भागने को उद्यत सी जान पड़ती। यह देख कर वह जहाँ का तहाँ खड़ा रह जाता। आज कुछ अँधेरा होने के कारण वह चुपके चुपके रतनमाला के पास पहुँच गया और बोला—यह रोज रोज की चोरी तो अच्छी नहीं है?

रतनमाला—चोरी किस बात की?

नूर मुहम्मद—फूलों की।

रतनमाला—फूल तो मैं रोज आपके सामने ही तोड़ती हूँ। इसे आप चोरी कैसे कह सकते हैं?

नूर मुहम्मद—चोरी कई प्रकार की होती है।

रतनमाला—होती होगी, मगर मैं तो किसी प्रकार की चोरी नहीं करती।

नूर मुहम्मद—चोरी और सीना जोरी इसी को कहते हैं।

इस बार रतनमाला ने कोई उत्तर नहीं दिया। मालूम नहीं किस बात का क्या अर्थ निकाल कर नूर मुहम्मद झगड़ा खड़ा कर दे। यही सोच कर वह और चुप हो रही। माता के शब्द—कैसी भयानक घटा घिरी है, यह पानी क्या जल्दी निकलने वाला है!—उसके हृदय में प्रतिध्वनित से हो उठे। भय से वह काँप उठी। हाथ से अञ्चल छूट गया और सारे फूल पृथ्वी बिखर पड़े।

नूर मुहम्मद—फूल क्यों गिरा दिए?

रतनमाला—आपके फूल थे। आपके सामने उपस्थित हैं।

नूर मुहम्मद—मैं तुमसे छीन तो नहीं रहा था।

रतनमाला—और किस तरह का छीनना होता है?

रतनमाला की आँखों से आँसू निकल पड़े। बड़ी देर से जो घटा घिरी थी उसने उसका पूरा साथ दिया। बड़ी बड़ी बूँदें पड़ने लगीं। बिजली चमक गयी और बादल गरज उठा।

नूर मुहम्मद—बड़ी भोली हो। मैंने तो सिर्फ हँसी की थी। इतना भी नहीं समझती हो। कौन दर्जे में पढ़ती हो।

रतनमाला—इस वर्ष आठवीं कक्षा में पढ़ूँगी।

नूर मुहम्मद—यानी मिडिल में।

रतनमाला—जी हाँ।

नूर मुहम्मद—खूब पढ़ो। यह तुम्हारे पिता जैसे उत्साही आदमी का ही काम था नहीं तो लड़कियों के पढ़ाने लिखाने की कौन परवाह करता है।"

रतनमाला ने कोई उत्तर नहीं दिया।

नूर मुहम्मद ने फिर कहा—अपने फूल उठा लो। पानी बरस रहा है खराब हो जायँगे।"

रतनमाला फूल उठाने लगी। नूरमुहम्मद ने भी उसकी सहायता करते हुये कहा—इस बाग को अपना ही समझो। जब जितनी ज़रूरत पड़े फूल तोड़ सकती हो।

रतनमाला बिना कुछ उत्तर दिये फूल लेकर अपने घर की ओर जाने लगी। पर पानी का जोर बहुत हो गया था। वह एक पेड़ की नीचे धोती सँभालने के लिये ज़रा ठहरी। नूरमुहम्मद ने उसका हाथ पकड़ कर कहा—भीग जाओगी। सामने तुम्हारा घर ही तो है। पाँच मिनट ठहर जाओ पानी निकल जाने पर चली जाना।

रतनमाला—यहाँ भी तो भीग ही रही हूं।

नूरमुहम्मद—सामने की मसजिद में चलो। वहाँ कोई भय नहीं है।

यह कह कर वह रतनमाला को खींचता हुआ मसजिद की ओर ले चला। रतनमाला मारे भय के थर-थर काँपने लगी। नूरमुहम्मद उसके भय का कारण समझ गया और बोला—डरो मत। मसजिद खुदा का घर है। वहाँ किसी प्रकार का अनिष्ट सम्भव नहीं है। और फिर तुम तो पढ़ी लिखी हो पढ़ी लिखी लड़कियाँ कहीं इस प्रकार डरती हैं।

यह सुनकर रतनमाला के हृदय में कुछ बल आया। उसने कहा—मुझे छोड़ दीजिये। मैं आपसे नहीं डरती हूं। भय है मुझे नाले के बढ़ जाने का! अम्मा घबड़ा रही होंगी। उन्होंने आते ही समय मने किया था।

नूरमुहम्मद—नहीं, ऐसा नहीं होगा। भीग जाओगी तो तुम्हारे बाप कहेंगे नूरमुहम्मद के यहाँ ज़रा सी ठहरने को भी जगह नहीं मिली। वे मुझे खूब जानते हैं। हाँ तुम यह कह

सकती हो कि यहाँ पर कोई तीसरा आदमी नहीं है। अच्छा मैं अपनी नौकरनी को बुलाता हूं।

यह कह कर उसने "दादी दादी" की आवाज़ लगाई जिसके उत्तर में फटी और मैली धोती पहिने हुए एक अधेड़ रमणी आकर उपस्थित हुई! उसका चेहरा बहुत ही गम्भीर था और उस पर उदासी छाई हुई थी। मालूम होता था उसको जीवन में बहुत कष्टों का सामना करना पड़ा है। दादी ने आते ही ठिठक कर कहा—ऐं! चन्द्रशेखर की लड़की?

नूरमुहम्मद—हाँ! फूल तोड़ने आई थी। तब तक पानी आगया डर रही थी इसलिये मैं ने तुमको बुलालिया है।

दादी ने रतनमाला के पास जाकर कहा—बेटी! डरो मत यह तुम्हारा ही घर है।

दादी को देखकर रतनमाला को डाढ़स हुआ! उसको अपने ऊपर बड़ी लज्जा आई। उसने मन ही मन कहा—नूरमुहम्मद की जैसी सुन्दर सूरत है वैसा ही सुन्दर उसका हृदय भी है! मैंने नाहक उसका अविश्वास किया था। वह तो मेरा सगा भाई सा जान पड़ता है।

दादी एक तरफ बैठ गई और नूरमुहम्मद तथा रतनमाला में इधर उधर की बातें होने लगी। इन्हीं बातों द्वारा रतनमाला को मालूम होगया कि नूरमुहम्मद एक उच्च घराने का मुसलमान है। यही नहीं वह मुहम्मद पैगम्बर के वंश का भी है। वह बड़ा धनी है। इसी वर्ष उसने अलीगढ़ कालेज से बी० ए० पास किया है और डिप्टी कलेक्टरी के उम्मीदवारों में वह चुन लिया गया है। पर इस चर्चा से क्या लाभ? नूरमुहम्मद भले ही कुबेर के समान धनी और काम के समान सुन्दर हो। आखिर है तो

वह मुसलमान और मुसलमान से दूर रहना ही हिन्दू स्त्री का कर्त्तव्य है।

आधे घंटे में पानी कुछ कम हुआ। रतनमाला मसजिद के बाहर निकल आई और नाले पर पहुँची। पीछे पीछे नूरमुहम्मद भी आया। दादी मसजिद में ही बैठी रही। नाला बड़ी तेज़ी से बह रहा था। नूरमुहम्मद ने कहा—आज यहीं रह जाओ कल चली जाना।

रतनमाला—ऐसा नहीं हो सकता।

नूरमुहम्मद—क्या हर्ज है?

रतनमाला—हमारे पिता को इस पार आना पड़ेगा।

नूरमुहम्मद—यह तो ठीक है। पर जाओगी कैसे?

रतनमाला—कूद पड़ूँगी और तैर जाऊँगी।

नूरमुहम्मद—यदि डूबने लगीं तो?

रतनमाला—देखा जायगा।

नूरमुहम्मद समझ गया कि रतनमाला रुकने वाली लड़की नहीं है। थोड़ी ही दूर पर नाला यमुना से मिलता था। वहाँ एक छोटी सी डोंगी किनारे से बँधी थी। नूरमुहम्मद दौड़ कर उसे ले आया और रतनमाला से उस पर बैठने के लिये कहा। रतनमाला डोंगी पर बैठ गई और नूरमुहम्मद ने पतवार सीधी की। देखते ही देखते डोंगी उस पार पहुँच गई। नूरमुहम्मद ने कहा—आज तुमको मैंने इस नाले के पार किया है पर इससे भी एक बड़ा नाला है वह है, संसार। मालूम नहीं उसके पार तुम्हें कौन करेगा? मैं तो शायद इतना भाग्यवान नहीं हूं?

रतनमाला ने कोई उत्तर नहीं दिया। ईश्वर जाने उसने इसका कुछ अर्थ समझा या नहीं।

दूसरा परिच्छेद

जब पानी बरसने लगा तो रतनमाला की माता छत पर से नीचे उतरी। अभी आधा घंटा दिन बाकी था किन्तु अँधेरा इतना बढ़ गया था कि इस बात को सिवाय घड़ी के और कोई मानने के लिये तैयार न था। यह समय ऐसा नहीं है कि रतनमाला जैसी सयानी लड़की घर के बाहर रहे। माता अपने इसी एक वाक्य को जप रही थी। इस कुसमय में रतनमाला जो नाले के उस पार चली गई है इस बात में माता अपना ही दोष अधिक समझती है क्योंकि यदि वह रतनमाला को डाट देती या उसको न जाने के लिये साफ साफ मना कर देती तो वह कदापि न जाती। रतनमला ऐसी लड़की नहीं है जो माता का कहना न माने? फिर माता ने उसे क्यों जाने दिया? इसका भी कारण है। वह बेटी को बहुत प्यार करती थी। वह यह नहीं चाहती थी कि केवल थोड़े से फूल न पाने के कारण बेटी का दिल दुखी हो। माता अपनी इस कमज़ोरी को जानती थी। पर इसे वह एक गुण समझती थी। उसका कहना था—बालक-बालिकाओं की प्रवृत्तियों को रोकने से उनका मार्ग बदल देना अच्छा है। खेलना बालकों का स्वभाव है। यह रोका नहीं जा सकता है। हाँ, उनके खेलने के ढंग को बदला जा सकता है। यदि बालक कुत्ते के साथ खेलता है तो बजाय इसके कि उसे रोका जाय उसके हाथ में रबड़ या कपड़े का बना बड़ा सा कुत्ता दिया जा सकता है। ऐसा करने से बालक का खेलना

न बन्द होगा और उसे वह हानि भी न होगी जो कुत्ते के साथ खेलने से होती। जो बालक आग से खेलते हैं उनके हाथ में आग के ही समान चमकती चीजे देकर बिना उनका खेलना रोके उनको आग में जलने से बचाया जा सकता है। रतनमाला फूल से खेलती है। फूल कोई खराब चीज़ नहीं है। फिर उसे क्यों रोका जाय। वह फूल लेने बाहर जाती है क्योंकि घर में फूल नहीं हैं। यदि घर में फूल होते तो वह बाहर क्यों जाती? उसके बाहर जाने में भय अवश्य है। तो क्या उसे भय दिलाकर डरपोक बनाया जाय। यह भी तो बडी कमज़ोरी है। रतनमाला की माता के मुख से ऐसी बातें सुनकर उसके पिता भी कुछ न बोलते। यही कारण है कि रतनमाला इतनी निडर है और वह जहाँ चाहती है बेधड़क चली जाती है।

यहाँ इन दम्पति का कुछ परिचय दे देना अनुचित न होगा। रतनमाला की माता का नाम गङ्गा है। गङ्गा परतावगढ़ के पास किसी गाँव में एक कुलीन सय्यूपारीण पंडित के घर में पैदा हुई थी। उसके बाप स्त्री शिक्षा के बड़े प्रेमी थे। उन दिनों लड़कियों के पढ़ने के लिये शहरों में तो अवश्य छोटे मोटे स्कूल थे पर गाँवों में इसका बिलकुल अभाव था। पर इससे क्या? पिता ने गङ्गा को पढ़ाया। दो ही साल में वह रामायण पढ़ने लगी और शुद्ध हिन्दी लिखने लगी। गाँव वालों के लिये यह बिलकुल नई बात थी। लड़की को पढ़ा कर गङ्गा के पिता बड़े चक्कर में पड़ गये क्योंकि देहात में कोई ऐसा पढ़ा लिखा लड़का मिलना मुश्किल था जिसके साथ वे गङ्गा का व्याह करते। जब गङ्गा आठ वर्ष की हुई तभी से यह चिन्ता उन्हें सताने लगी थी। योग्य बर मिलने का कोई उपाय न देखकर उन्होंने उसी गाँव के एक गरीब ब्राह्मण के लड़के भोंदू को पढ़ाना

निश्चय किया। भोंदू की आयु उस समय दश वर्ष की थी और वह काला अक्षर भैंस बराबर की कहावत चरितार्थ कर रहा था। गाँव वालों की समझ में भोंदू से बढ़कर गँवार लड़का हो ही नहीं सकता था। पर गङ्गा के पिता भोंदू की सरलता और सिधाई पर मुग्ध थे। उन्होंने सोचा कि भोंदू पढ़ कर विद्वान हो सकता है। उनका सोचना ठीक निकला। जिस साल उन्होंने भोंदू को प्रयाग के हिन्दू हाई स्कूल में भर्ती कराया उसी साल उसने अपना नाम भोंदू से बदलकर चन्द्रशेखर कर लिया। जब उसने किनारीदार एँड़ी तक लटकती धोती, लाल जूता, डोरिया की कमीज और काली टोपी धारण की तो गाँव वालों को अपना विचार बदलना पड़ा। यहाँ तक कि लोग उसके पुराने नाम भोंदू को भूलगये और उसे चन्द्रशेखर कहने लगे। २० वर्ष की उमर में चन्द्रशेखर ने ऐंट्रेंस पास किया। उसी साल उसके साथ गङ्गा का विवाह हुआ। और अभाग्य से उसी साल प्लेग का भयंकर प्रकोप हुआ जिससे गङ्गा और चन्द्रशेखर दोनों के पिता माता सब मर गये। गङ्गा के पिता की जितनी जायदाद थी वह सब उसके चाचा ने छीन ली। यहाँ तक कि गङ्गा का पिता के घर में रहना तक मुश्किल हो गया। चन्द्रशेखर के पहले ही से कोई जायदाद नहीं थी। अतएव उसे सिवाय नौकरी के और कुछ न सूझ पड़ा। माता पिता और सास ससुर के वियोग से शोकातुर चन्द्रशेखर दुखिया गङ्गा को उसी हालत में छोड़कर प्रयाग आया। ईश्वर की कृपा से जिस स्कूल में वह पढ़ता था उसी में उसे ३०) मासिक की मास्टरी मिल गई। अपनी आगे पढ़ने की इच्छा को बड़े यत्न से दबाकर उसने गङ्गा को अपने पास बुला कर अपने स्वर्गीय ससुर के साथ सच्ची सहानुभूति और कृतज्ञता प्रकट की और बलुआघाट में जहाँ शहर का गंदा नाला यमुना से

मिलता है, एक मकान किराये पर लेकर उसमें रहने लगा। यहीं पर रतनमाला का जन्म हुआ। दूसरे वर्ष गङ्गा को भी एक स्थानीय कन्या-पाठशाला में १५) रु० की जगह मिल गयी।

ऊपर की घटना को अब पूरे १४ साल हो गये हैं। इस समय में बड़े बड़े परिवर्त्तन हुए किन्तु चन्द्रशेखर के जीवन में इसके सिवाय कि वे ३४ वर्ष के हो गये और कोई विशेष परिवर्त्तन नहीं हुआ। पहले उनको ३०) मिलते थे अब ३५) मिलते हैं। स्कूल मास्टरी में विद्या, धन, तन्दुरुस्ती इत्यादि किसी बात की उन्नति होनी कठिन है। ऐसी दशा में चन्द्रशेखर ने इस ५) की वृद्धि को ईश्वर की बड़ी कृपा समझा। गङ्गा को अलबत्ता १५) की जगह पर ४०) मिलते हैं। पर इसके लिए उसको बड़ा परिश्रम करना पड़ा है। दिनभर स्कूल में काम करने, और सबेरे शाम भोजन बनाने के पश्चात जो समय बचता था उसमें वह लगातार पढ़ती थी। पढ़ते पढ़ते उसका शरीर सूख गया तब उसे मिडिल पास का सार्टीफिकेट मिला। मिडिल पास करने के बाद उसने ट्रेनिंग पास किया। इसीलिये अब वह ट्रेन्ड अध्यापिका होने के कारण ४०) रु० मासिक पाती है।

रतनमाला भी अब १४ वर्ष की हो गई है। उसके बाद उसके दो भाई और पैदा हुए थे। पर वे तोड़ ली गई खिलती कली के समान माता के गोद से ही स्वर्गवासी हो गये। उसके बाद चन्द्रशेखर के कोई सन्तान नहीं हुई। सम्भव है इसी लिये वे रतनमाला को बहुत प्यार करते हों।

अब हम अपने पूर्व वृत्तान्त पर आते हैं। जब अँधेरा बहुत बढ़ गया तो गङ्गा के दिल में घबराहट पैदा हुई। उसने नाले की तरफ आकर देखा तो उसकी घबड़ाहट और बढ़ गई। उसने आप ही आप कहना शुरू किया—अब क्या रतनमाला इस पार

आ सकती है ? कैसे आएगी ? न इसे तैरना मालूम है और न वह उस पार किसी ऐसे मल्लाह को जानती है जो नाव पर बैठाल कर उसे इस पार पहुँचा देगा। फिर क्या होगा ? वह रात भर उस पार कहाँ रहेगी ? क्या खायगी ? उफ् कैसा भयङ्कर नाला है। कहीं ऐसा तो नहीं हुआ कि आती रही हो और डूब गई हो। इस बार गङ्गा की आँखें डबडबा आईं उसने फिर कहा—बड़ी सुकुमार लड़की है अँधेरे में कहाँ खड़ी होगी ? बादल गरज गरज कर उसे डरा रहे हैं। आह ! क्या करूँ ? शङ्कर ! महादेव !! दया करो !!!

मकान के दक्षिण तरफ छोटा सा एक पुराना शिवाला था। उसमें शिव जी विराजमान थे। कभी कभी रतनमाला उन्हें फूलों से ढक देती थी और कभी उन्हें उठा कर अपनी गुड़ियों में रख देती थी। शिवजी को देखते ही गङ्गा को बेटी की इस शिशु-लीला की याद आगई और उसका गला भर आया। नत मस्तक हो शङ्कर को प्रणाम किया और प्रार्थना की कि देव ! शीघ्र बेटी घर आ जावे।

चन्द्रशेखर की छुट्टी तो ठीक चार बजे हो जाती थी। पर इधर दो तीन रोज से वे शाम से पहले घर न पहुँचते थे, क्योंकि उनके स्कूल में कई रोज से नगर निवासियों की एक बड़ी सभा हो रही थी। सभा का उद्देश था—नगर में अकारण पैदा हुए हिन्दू मुसलमानों के झगड़ों का रोकना ! प्रायः शहर के सभी प्रतिष्ठित प्रतिष्ठित हिन्दू मुसलमान इसमें सम्मिलित थे। चन्द्रशेखर किसी प्रकार के भी आन्दोलन में शामिल न होते थे। इस सभा में भी वे शामिल न थे। पर चूँकि इसकी बैठक उन्हीं के स्कूल में होती थी उन्हें प्रबन्ध समिति में शामिल होना पड़ा था। वे प्रबन्ध समिति के मंत्री नियुक्त हुए थे। इससे

उनको एक लाभ भी हुआ। अर्थात् नगर के बड़े बड़े हिन्दू मुसलमानों से भली भाँति परिचित होगये।

जब वे घर पहुँचे तो दिन डूब चुका था। पर घर में चिराग तक न जला था। उन्होंने सोचा—शायद माँ बेटी बढ़े हुए नाले की बहार देख रही हैं। इसीसे इस संध्या कृत्य को भूल गई हैं। पानी उन्हें रास्ते में बरसा था। इसी लिये उन्हें और देर हुई थी। वे एक मंदिर में ठहर गये थे। फिर भी भीगने से न बचे थे। घर में प्रवेश करते समय उनके हृदय में एक प्रकार की वेदना उत्पन्न हुई। शायद उन्होंने सोचा कि जब रतनमाला अपने ससुराल चली जायगी तो मेरे घर में चिराग कौन जला-एगा। चिराग रोज रतनमाला ही जलाती थी। सम्भव है इसी लिये अंधेरा घर देख कर उपरोक्त बात सोची हो। उन्होंने सोचा था घर में पहुँचते ही कपड़े बदल कर रतनमाला की माँ से सभा का हाल बतावेंगे पर घर में किसी का पता तक न था। अतएव भीगे कपड़ों में ही वे नाले की ओर गये। उन्हें देखते ही गङ्गा ने घबड़ाई हुई आवाज में कहा—इस नाले के उस पार जाने का जो पुल है यहाँ से वह कितनी दूर है?

चन्द्रशेखर—क्यों? करीब एक मील।"

गङ्गा—तुम्हें नाले के उस पार जाना होगा।

चन्द्रशेखर—रतनमाला उसी पार रह गई क्या।

गङ्गा—हाँ।

चन्द्रशेखर—मैं तो पहले ही कहता था कि बेटी को नाले के पार मत भेजा करो।"

गंगा—मगर तुमनें यह तो कभी नहीं कहा कि नाला बढ़ जायगा।

चन्द्रशेखर—नाला के बढ़ने का उतना डर नहीं है जितना ..... ।

गंगा—रुक क्यों गये ? कहो न ?

चन्द्रशेखर—उधर मुसलमानों की बस्ती अधिक है ।

गङ्गा—मैं तुमसे कब से कहती आ रही हूं कि रतनमाला के विवाह का कोई प्रबन्ध करो ।

चन्द्रशेखर—और यदि प्रबन्ध नहीं होगा तो बेटी को मुसलमानों की बस्ती में भेज दोगी ?

गङ्गा—तुम इतना व्यङ्ग क्यों बोल रहे हो । मैं तो अपनी गलती स्वीकार कर रही हूं । अपना दोष तुम्हारे सिर मढ़ती तो कहते !

चन्द्रशेखर—क्या तुम्हें नहीं मालूम था कि मुसलमान हिन्दू स्त्रियों और लड़कियों की आज कल बड़ी चोरी कर रहे हैं ।

गङ्गा—जरूर मालूम था मगर मुझको इसका खयाल नहीं रहा ।

चन्द्रशेखर—आज मैंने मुसलमान नेताओं की जो बातें सुनी हैं उससे मैं कह सकता हूं कि हिन्दू स्त्रियों का जीवन बड़े संकट में है ।

गङ्गा—क्या सुना ?

चन्द्रशेखर—सुना तो बहुत कुछ है क्या क्या कहूं । सब का मतलब यही है कि मुसलमान हिन्दुओं के लिये गाय खाना नहीं बन्द कर सकते और न वे हिन्दू स्त्रियों का बहकाना ही बन्द कर सकते हैं ।

गङ्गा—यह तो ठीक है । इसके लिये तो मुसलमान दोषी नहीं हैं । आप अपनी स्त्रियों को रोकें, मुसलमानों को रोकने वाले आप कौन होते हैं ?

चन्द्रशेखर—और अपनी गायों को भी रोकें कि वे मुसलमानों के पेट में न घुस जायँ ?

गङ्गा—बहस ही करोगे या बेटी का पता भी लगाओगे।

चन्द्रशेखर कुछ कहने ही वाले थे कि नाले में "छप छप" की आवाज ने उनका ध्यान आकर्षित किया। उन्होंने देखा कि एक नाव उनकी ओर आ रही है और उस पर दो आदमी बैठे हैं। उनमें कुछ बातें भी हो रही हैं।

देखते ही देखते नाव किनारे लग गई। रतनमाला अञ्चल में फूलों को लिये उतरी और दौड़ कर माता से लिपट गई। नूरमुहम्मद ने चन्द्रशेखर को पहचान कर कहा—पंडित जी हम फूल अपने नौकर से पहुँचवा दिया करेंगे। इसके लिये बेचारी छोटी सी बच्ची को तकलीफ न दें।

इसमें क्या तकलीफ है—कहते हुए चन्द्रशेखर ने मुस्करा कर नूरमुहम्मद को विदा किया।

उस समय रतनमाला यह सोच रही थी कि नूरमुहम्मद संसार में सर्व-श्रेष्ठ युवक है। उसे इस बात का अनुमान तक न हुआ कि नूरमुहम्मद जितना सुन्दर है उसका हृदय उतना ही काला निकलेगा।

तीसरा परिच्छेद

—— —:※:——

नूरमुहम्मद रतनमाला को पहुँचा कर वापस तो आया पर उसका दिल उसी पार रह गया। रतनमाला से उससे जितनी बातें हुई थी उसे एक एक करके सब याद आने लगीं। मुस्कुराते समय रतनमाला के गालों में जो गड्ढा पड़ गया था उसका ध्यान आते ही नूरमुहम्मद ने जरा मुस्करा कर अपना गाल सिकोड़ा पर बजाय एक सुन्दर गड्ढा पड़ने के मुँह की आकृति बिगड़ती सी जान पड़ी। तब उसने अपनी अङ्गुली से अपने गालों के बीचोबीच में दबाया और मन ही मन कहा—यही स्थान है। मैंने बड़ी भूल की। चाहता तो एक बार चूम सकता था। वह कुछ न बोलती। और यदि बोलती भी तो उसे हाथ पाँव जोड़ कर मना लेता। बड़ी भोली लड़की है। अभी वह कुछ समझती भी तो नहीं है। वह इन्हीं विचारों में झूमता हुआ आगे बढ़ता जाता था कि अचानक एक ताड़ के पेड़ से टकरा गया। मस्तक से रक्त निकल पड़ा। क्षण भर को उसके सारे मनसूबे हवा हो गये और उसने कहा—"या खुदा! यह क्या किया। जो पराई बहू बेटियों की तरफ नज़र उठाता है उसकी यही दशा होती है। बेशक मैंने आज एक बहुत बड़ा कसूर किया अल्लाह! परवर दिगार!! मुझे माफ कर!!!"

यह कह कर वह रतनमाला को भूल जाने का यत्न करने लगा। अपने मन को समझाने के लिये उसने कहा—वह काफिर की लड़की है। बुत परस्त है। उसको तो एक मिनट के लिये भी

दिल में जगह न देनी चाहिये। जब इस प्रकार दिल में मजहबी ख्याल जोश मारने लगे तो यहाँ तक नौबत आई कि वह जोर से कह उठा—रतनमाला काफिर की लड़की है। और वह भी एक बहुत बड़े काफिर की यानी हिन्दू की। हिन्दू की लड़की को खराब करने में पाप नहीं हो सकता। यह तो एक सबाब का काम है। हिन्दू काफिरों की लड़कियाँ ब्याह कर हमारे पूर्वज रास्ता साफ कर गये हैं। एक वह दिन था जब ऊँटों में काफिरों की लड़कियाँ लाद लाद कर मुसलमान लोग जहाँ चाहते थे ले जाते थे। मेरे मस्तक में जो चोट लगी है वह इस लिये नहीं कि मैंने पराई बेटी के ऊपर नजर उठाई बल्कि इस लिये कि मैंने उसे बे-दाग छोड़ दिया। अफसोस मैंने कितनी भूल की। मुझे उसे पकड़ कर बन्द कर लेना था। इसका नतीजा पीछे जो होता देख लिया जाता।

नूरमुहम्मद की अधेड़ नौकरानी अभी मसजिद में ही बैठी हुई थी। नूरमुहम्मद का बड़बड़ाना सुन कर वह मसजिद के बाहर आई और बोली—क्या हुआ बेटा। किसी से झगड़ा तो नहीं हो गया?

नूरमुहम्द—कौन हो दादी! अभी तुम यहीं बैठी हो।

नौकरानी—हाँ बेटा! कहाँ जाती?

नूरमुहम्मद—क्या बतलाऊँ दादी! बड़ा अफसोस है।

नौकरनी—अफसोस किस बात का, तुझे किस की कमी है? बेटा?

नूरमुहम्मद—अब क्या बतलाऊँ?

नौकरानी—आज तो तूने बड़ी अच्छी चिड़िया फँसाई थी। उसे छोड़ क्यों दिया? इसी बात का अफसोस तो नहीं है!

नूरमुहम्मद—अब अफसोस ही होकर क्या करेगा ?

नौकरानी—यह क्या कहता है बेटा ! जो चीज आज मिली है वह कल भी मिल सकती है।

नूरमुम्मद—कल कैसे मिल सकती है ?

नौकरानी—वह फूल तोड़ने तो कल भी आएगी।

नूरमुहम्मद—नहीं असकती। देखती नहीं हो नाला कितना बढ़ा हुआ है।

नौकरानी—नाला तो अभी दो तीन घंटे में घट जायगा। सबेरे तक तो कोई भी इसके पार आ जा सकता है।

नूरमुहम्मद—और यदि रात में फिर पानी बरस गया तो ?

नौकरानी—ऐसा ही था तो तूने उसे पंहुँचा क्यों दिया। वह तो बिल्कुल तेरे हाथ में थी।

नूरमुहम्मद—यही तो मेरी भी समझ में नहीं आता। उस की चितवन में न मालूम क्या बात थी कि मेरी हिम्मत उसके ऊपर हाथ लगाने की न पड़ी।

नौकरानी—अभी तू लड़का है कुछ समझता नहीं है। तेरे बाप तो इन मामलों में इतने पहुँचे हुए थे कि बस। उन्होंने ही तो मुझे भी...... ।

नूरमुहम्मद—तुम्हें क्या दादी ?

नौकरनी—अब दबी हुई बातों को उखाड़ने से क्या फायदा बेटा। यह तो तुझे मालूम ही है कि एक दिन मैं भी हिन्दू की लड़की थी।

नूरमुम्मद—हाँ।

नौकरानी—अब और मत कहलवाओ बेटा। हिन्दुओं की

बड़ी बुज़दिल कौम होती है। उनकी बहू बेटियों को आज कल जो चाहे सो बेइज़्ज़त कर सकता है और मुझे तो हिन्दुओं की बेइज़्ज़ती देख कर बड़ी ही खुशी होती है।

नूरमुहम्मद—यह क्यों?

नौकरानी—न मालूम क्यों बेटा! यह भी अल्लाह की मेहरबानी होगी। नहीं तो मेरे विचारों में ऐसा उलट-फेर क्यों होता?

नूरमुहम्मद—जरूर ऐसा ही होगा। हमारे मज़हब में यही तो खूबी है कि जो अल्लाह को मंजूर होता है वही आदमी सोचता है, और करता है।

नौकरानी—यह तो मैं नहीं कह सकती बेटा! मेरी समझ में तो जो आदमी सोचता है और करता है उसी को वह अल्लाह की मर्जी कह बैठता है।

नूरमुहम्मद—नहीं नहीं, यह बात है। यह हिन्दूपने की बातें मुझे अच्छी नहीं लगतीं। तुम पहले हिन्दू थीं इसी लिये ऐसा कहती हो। मुझे खूब मालूम है कि मुसलमान मजहब वैसा ही है जैसा अभी मैंने कहा है।

नौकरानी—होगा बेटा। मुझे अल्लाह के नाम के सिवाय और आता ही क्या है। वह भी तुम्हारे बाप के बदौलत। नहीं तो न मालूम क्या दुर्दशा होती।

नूरमुहम्मद—ऐं हं। कहाँ की बातें कहाँ आकर खतम हुईं। रात बहुत हो आई है पर मतलब अभी कुछ भी नहीं हल हुआ।

नौकरानी—मतलब हल होनेमें क्या रक्खा है। उस चिड़िया को चाहे जैसे होगा मैं तुम्हारे जाल तक पहुँचा दूंगी।

नूरमुहम्मद—शाबाश! दादी शाबाश! जब तुम्हारी मेहर

बानी है तो मैं इन्द्र की परियों को भी इसी बाग में नचवा सकता हूँ। रतनमाला की औक़ात ही क्या है।

यह सुनते ही नौकरानी फूल कर कुप्पा हो गई।

यहाँ नूरमुहम्मद का कुछ परिचय दे देना आवश्यक है। नूरमुहम्मद के पूर्वज शाहजादा खुशरू के साथ प्रयाग में आये थे और यहीं बस गये थे। तभी से इन लोगों के पास जमीन जायदाद काफ़ी थी। बीच में ये लोग कुछ गरीब हो गये थे पर बलवे के बाद इनको न जाने कैसे बहुत सी जमीन और मकानात आप से आप मिल गये थे। नूरमुहम्मद के बाप की बड़े धनियों में गिनती थी। यहाँ तक कि एक बार उन्होंने छोटे लाट को बुला कर अपने घर में दावत दी थी। यदि उन्हें शराब इत्यादि का व्यसन न होता तो वे आज नूरमुहम्मद के लिये एक बड़ी भारी जायदाद छोड़ जाते। फिर भी वे जो छोड़ गये हैं वह कम नहीं है। २५०००) सालाना आमदनी की ज़िमींदारी है। नूरमुहम्मद के बाप बड़े धार्मिक आदमी थे। हिन्दू मुसलमान के झगड़े उन्हें पसन्द न थे। उनकी एक छोटी सी मसजिद थी। उसी के बगल में एक मंदिर भी था। पर उन्होंने कभी मंदिर की आरती बन्द करने का यत्न नहीं किया। उनका कहना था—मंदिर और मसजिद दोनों खुदा के घर हैं जो दो में से एक का भी अनादर करता है वह खुदा का अनादर करता है। एक बार जब वे अपनी मसजिद में नमाज पढ़ रहे थे तो मंदिर में आरती होने लगी थी। इस पर उनके साथ के कुछ मुसलमानों ने आरती बन्द कराने की चर्चा चलाई तो उन्होंने कहा था—न मालूम तुम लोगों को आरती से क्यों चिढ़ है। मुझे तो नमाज पढ़ते समय यदि आरती बज उठती है तो ऐसा ही मालूम होता है मानो मुझे खुदा के फरिश्ते बहिश्त (स्वर्ग) की ओर लिये उड़े

जारहे हैं और उनके पाँव के घुँघरू बज रहे हैं। वे गाय का मांस अवश्य खाते थे पर उनका हिन्दुओं के चिढ़ाने का कदापि अभिप्राय नहीं था। उन्हें कविता करने का भी शौक था और वे उर्दू तथा फारसी में बड़े ललित और भावपूर्ण छन्दों की रचना करते थे। अपने इन्हीं गुणों के कारण वे क्या मुसलमान क्या हिन्दू सब को बड़े प्रिय थे। जब तक वे प्रयाग में रहे हिन्दू मुसलमानों में झगड़ा नहीं हो पाया। उन्होंने अपनी समझ में केवल एक कसूर किया था। अर्थात जो उनकी नौकरानी है वह पहले एक हिन्दू की लड़की थी। उन्हीं के कुछ ब्यवहारों के कारण उसे अपने माँ बाप और पति से सदैव के लिये अलग होना पड़ा था। लोग कहते हैं वे बड़े व्यभिचारी भी थे। पर इसका और कोई उदाहरण नहीं मिलता। जो उदाहरण मिलता है उसी का प्रायश्चित करने वे मक्के गये थे। पर अब तक नहीं आए। पता नहीं जीते हैं या मर गये। नूरमुहम्मद की माता भी एक पड़ोसी हिन्दू की लड़की थी। लड़कपन ही से विधवा होने के कारण उसकी बड़ी दुर्दशा थी। अन्त में नूरमुहम्मद के पिता से उसका प्रेम होगया और उसने इसलाम धर्म स्वीकार कर लिया। कहते हैं इस हिन्दू विधवा से बिवाह न करते तो नूरमुहम्मद के बाप के ऐसे उदार विचार न होते। नूरमुहम्मद भी लड़कपन में बिलकुल अपने माँ बाप के ही स्वभाव का था पर शिक्षा का उस पर उलटा असर हुआ। उसने बी०ए० पास करने के साथ ही यह भी समझ लिया कि हिन्दुओं के कारण मुसलमानों की तरक्की रुकी हुई है। इसके लिये सब प्रकार से हिन्दुओं का नाश करना होगा। उसने मुसलमानों की एक गुप्त समिति बनाई। और यथाशक्ति दो तीन शहरों में इसकी शाखाएँ भी खोलीं। इस समिति का काम था—प्रत्येक स्थान के

मुसलमानों को वहाँ के हिन्दूओं से लड़ने के लिये भड़काना, उनके दिलों में हिन्दुओं के प्रति घृणा उत्पन्न करना, हिन्दू स्त्री और बच्चों को फुसला कर या बलपूर्वक मुसलमान बनाना आदि। इसके लिये उसने रंडियों हिजड़ों और चूड़ी बेचने वालियों इत्यादि तक को अपनी समिति में सम्मिलिति किया। मुसलमान गुंडे चुराचुरा कर हिन्दू स्त्रियों और बच्चों को उसके घर भेजने लगे और वह उनको मुसलमानों के साथ विवाहने और दूर दूर के देशों में बेचने लगा।

स्त्रियों के चुराने में उसने दो बातें देखीं। जो स्त्री फुसला कर लाई जाती थी उसका पता लोग जलदी नहीं पाते थे और यदि पता पा भी जाते तो कुछ कर नहीं सकते थे। क्योंकि फुसलाई हुई स्त्री मामला मुकद्मा पड़ने पर जज के सामने उसके मुआफिक ही बयान देती थीं। पर जो स्त्री बलपूर्वक लाई जाती थी उसका भंडाफोड़ हुए बिना नहीं रहता था और जज के सामने भी उसका बयान घातक ही होता था। इस लिये उसने फुसला कर ही स्त्रियों के चुराने की ताकीद कर रक्खी थी। रतनमाला के साथ भी उसने असल में यही चाल चली थी पर बेचारी रतनमाला इस बात को क्या समझती?

नूरमुहम्मद का ब्याह उसके चाचा की लड़की के साथ हुआ था। पर लड़कपन से ही जो स्त्री उसके साथ खेल-खेल कर बड़ी हुई थी, उसमें उसने वह बात न पाई जो लोग अपरिचित युवतियों में देख कर मुग्ध हो जाया करते हैं। परिणाम यह हुआ कि वह उससे अलग रह कर अपनी दुष्ट प्रवृत्तियों की प्यास बुझाने का यत्न करने लगा। कितनी ही हिन्दू विधवाओं को उसने चरित्र हीन बना दिया था। हिन्दू विधवाओं को फुसलाना उसने बड़ा आसान समझा था,

क्योंकि चारों ओर से तिरस्कृता होने के कारण वे उसकी बनावटी सहानुभूति के चक्कर में बड़ी जल्दी आ जाती थीं।

इस पँवारे को बहुत बढ़ाना हम उचित नहीं समझते जो लिखा है इसी से पाठक नूरमुहम्मद के स्वभाव के विषय में बहुत कुछ जान सकते हैं। अस्तु!

नौकरानी की बातों से उसे निश्चय हो गया था कि एक न एक दिन रतनमाला उसकी हो जायगी। इसलिये वह बहुत खुशी के साथ घर में घुसा और खाना खाकर पड़ रहा। बड़ी देर तक उसे नींद नहीं आई और नाना प्रकार के विचार उसके दिल में उठते रहे। इन्हीं विचारों में वह न जाने कब सो गया और एक मनोहर स्वप्न देखने लगा—मानों घटा घिरी है। नाला बढ़ा हुआ है। रतनमाला अपने घर जाने को कहती है पर जा नहीं सकती। वह (नूरमुहम्मद) उससे कहता है—यहीं रह जाओ कहाँ जाओगी। हिन्दू की जात अच्छी नहीं होती। मैं बड़ा अमीर आदमी हूं। मुसलमान हो जाओ और मेरी पत्नी बन कर सुख से समय बिताओ—यह सुनकर रतनमाला भयभीत होती है और भागने को करती है। वह उसका पीछा करता है। रक्षा का कोई उपाय न देख रतनमाला नाले में कूद पड़ती है और डूबती उतराती उस पार चली जाती है। उसकी माँ उसे झट उठा कर हृदय से लगा लेती है और वह (नूरमुहम्मद) हाथ मलता हुआ जहाँ का तहाँ खड़ा रह जाता है।

इसी प्रकार स्वप्नों की सैर करता हुआ प्रात:कालीन बादलों की गरज सुन कर नूरमुहम्मद चौंक पड़ा। उसकी आँख खुल गई और उसने देखा कि बड़े जोर से पानी बरस रहा है।

चौथा परिच्छेद

चन्द्रशेखर ने देखा कि आज सबेरे से ही पानी बरस रहा है। जिस रोज पानी खूब बरसता है। उस रोज स्कूलों में प्रायः छुट्टी हो जाया करती है। चन्द्रशेखर को यह विश्वास था कि छुट्टी हो जायगी। फिर भी उनसे यह साहस न हो सका कि आज स्कूल न जायँ। जब वे पढ़ते थे तो कभी कभी जान बूझ कर भी स्कूल नहीं जाते थे। पर अब तो पढ़ते नहीं हैं। नौकरी का मामला है। चाहे जिस प्रकार हो स्कूल जाना ही होगा। यही सोचकर वे खाना खाने के बाद कपड़े पहनने लगे। पहले सोचा खाली कमीज ही पहन कर चले जायँ। फिर सोचा, लड़के हँसेगे। अतएव कोट भी पहना। वैसे तो वे सदैव पाजामा पहन कर स्कूल जाते थे पर आज यह सोचकर कि रास्ते में पानी पड़ेगा और पाजामा चढ़ाते नहीं बनेगा उन्होंने धोती पहन ली। छाता बहुत दिनों से बे मरम्मत पड़ा था, पर उसके ठीक होने में बहुत देर नहीं लगी। लड़कों की बहुत सी कापियाँ घर पर जाँचने के वास्ते ले आये थे आज उनका ले जाना उचित न समझा। स्कूल एक मील से कम दूरी पर न था। घर से निकलते ही रास्ते में घुटनों पानी पार कर के जाना था। इसलिये वे एक हाथ में जूता और दूसरे में छाता लेकर सड़क पर आ खड़े हुए। उसी समय गङ्गा की गाड़ी आ खड़ी हुई। यह गाड़ी स्कूल की तरफ से थी और प्रतिदिन लड़कियों तथा अध्यापिकाओं को घर से स्कूल ले जाने और स्कूल से घर ले

आने के सिवाय और किसी काम में न आती थी। चन्द्रशेखर का स्कूल इस गाड़ी के रास्ते में ही पड़ता था। गङ्गा की इच्छा हुई कि पति को गाड़ी पर बैठाल लें। पर गाड़ी पर की दो अन्य अध्यापिकाएँ इस बात पर राजी न हुईं। अतएव गङ्गा को चुप रह जाना पड़ा। रतनमाला भी पिता को जूता लेकर चलते देख बहुत दुखी हुई ? पर इससे क्या ? दुनिया के काम किसी के दुख सुख की परवाह नहीं करते।

जब गाड़ी कुछ दूर चली गई तो चन्द्रशेखर धीरे धीरे चलने लगे। पानी बड़ी जोर से बरस रहा था। पतले कपड़े का छाता कितनी आड़ करता। थोड़ी ही दूर चलने पर वे भीग गये। एक बार मन में आया कि लौट चलें। फिर सोचा—यही दशा तो सब की होगी। स्कूल जायँ या न जायँ, इन दो विचारों का चन्द्रशेखर के दिल में बड़ा द्वन्द युद्ध हो रहा था। वे इन विचारों में इतने तल्लीन हो रहे थे कि एक जगह पर बड़ी देर तक खड़े भी रहे।

जिस सड़क से हो कर चन्द्रशेखर स्कूल जाते थे। उसके दोनों ओर ग्वालों की अच्छी बस्ती थी। इनमें से ऐसा कोई ग्वाला नहीं था जिसके दस बीस गाएँ न हों। ये गायें जिस रोज यमुना उस पार चरने नहीं जाती थीं उस रोज सड़क पर ही घूमा करती थीं। आज पानी बरसने के कारण ये इसी पार रह गई थीं। और दुम उठा उठा कर खूब इधर उधर दौड़ रही थीं। कहते हैं बादल देख कर मोर बहुत खुश होते हैं और नाचने लगते हैं। जिसने मोरों का नाचना नहीं देखा वह इन गायों का दुम उठा कर दौड़ना देखकर कम से कम उनकी खुशी का अनुमान अवश्य कर सकता है। चन्द्रशेखर इन गायों का

उल्लास देखकर ग्वालों के ऊपर बहुत बिगड़ रहे थे। इन ग्वालों को क्या अधिकार है कि वे सर्वसाधारण के चलने की सड़क पर अपनी इन उद्दंड गायों को ऐसी आज़ादी से छोड़ दें। इस तरह तो मालूम नहीं साल में कितने आदमी और बच्चे दब कर मर जा सकते हैं, पर इसकी दवा क्या है। कुछ नहीं। चन्द्र-शेखर इसी प्रकार कुछ सोच रहे थे कि उनका छाता देखकर एक गाय भड़की। वे कुछ पीछे हटे। उधर दूसरी गाय भड़की तब वे बगल की तरफ दबे। पर उस तरफ से एक गाय बड़ी तेज़ी से दौड़ी आ रही थी। चन्द्रशेखर उसी से टकरा कर गिर पड़े। गाय उनके ऊपर से होकर लौट गई।

जब चन्द्रशेखर को होश हुआ तो उन्होंने ने अपने को गङ्गा की गोद में लेटे पाया। उन्होंने बड़े विस्मय के साथ इधर उधर आँख फाड़ फाड़ कर देखना शुरू किया। पर उनकी समझ में कुछ न आया! उन्होंने धीरे से पूछा—हम कहाँ हैं?

गङ्गा—हमारे स्कूल में।

चन्द्रशेखर—यहाँ कैसे आ गये?

गङ्गा—मैं ही ले आई हूं।

चन्द्रशेखर—तुम्हें कैसे मालूम हुआ कि मैं रास्ते में गिर पड़ा हूं?

गङ्गा—हम लोगों की गाड़ी भी टूट गई थी। एक बैल गड्ढे में पैर पड़ जाने के कारण फिसल पड़ा था। और गाड़ी उलटते उलटते बची थी। उसका एक पहिया तो उसी समय निकल गया था। परमेश्वर की कृपा से किसी को चोट नहीं आई।

चन्द्रशेखर—तब क्या तुम लोग घर की तरफ लौट पड़ी थीं।

गङ्गा—नहीं हम लोग लोग बड़ी देर तक इस इन्तिज़ार में

थे कि गाड़ी सुधर जायगी और किसी तरह स्कूल पहुँच जायँगे।

चन्द्रशेखर—फिर मुझसे कैसे भेंट हुई।

गङ्गा—बताती हूँ। तुम्हारे स्कूल के कोई मास्टर हैं। स्कूल में छुट्टी हो जाने के कारण शायद अपने घर वापस जा रहे थे। रास्ते में तुम्हें पड़ा देख कर वे बहुत चकित हुए और दुखी भी हुए। वे ही तुमको पीठ पर लादकर इस ओर ला रहे थे। हम लोगों से भेंट न होती तो न मालूम कहाँ लेकर जाते और मारे मारे फिरते। बेचारे बड़े सीधे मास्टर हैं। ऐसा अच्छा आदमी मैंने कभी नहीं देखा था।

चन्द्रशेखर बड़ी देर तक सोचते रहे कि कौन मास्टर हैं। पर वे कुछ सोच न सके। तब बोले फिर वे कहाँ गये?

गङ्गा—वे हम लोगों के साथ ही आये थे। तुम्हारी हालत इतनी खराब हो रही थी कि वे जाना उचित न समझते थे।

चन्द्रशेखर—तो क्या वे मुझे स्कूल तक लाद कर ले आये थे।

गङ्गा—नहीं, हमारी गाड़ी ठीक हो गई थी। उसी पर तुम को यहाँ तक लाई हूं।

चन्द्रशेखर—और उस गाड़ी में जो स्त्रियाँ बैठी थीं, वे?

गङ्गा—हमारी दुर्दशा पर उन्हें दया आई। और उन्होंने हमारी सहायता करना अपना कर्त्तव्य समझा। वे सब की सब पैदल चल कर यहाँ तक आई हैं।

चन्द्रशेखर—निस्सन्देह हमारे पीछे उनको बड़ा कष्ट हुआ।

गंगा—उन्हें पैदल चलने का उतना कष्ट नहीं हुआ जितना

वे इस बात से दुःखी हो रही हैं कि उन्होंने तुमको वहीं गाड़ी पर क्यों न चढ़ा लिया जहाँ मैंने ऐसी इच्छा प्रकट की थी।

चन्द्रशेखर—स्त्रियों का हृदय बड़ा कोमल होता है। अवश्य उन्हें बड़ा दुःख हुआ होगा। पर अब बीती बात को सोचने से क्या फ़ायदा। मैं उनकी कृपा और तुम्हारे सौभाग्य से बाल-बाल बच गया हूँ।

इसी समय उस कमरे में लगभग २२ वर्ष के युवक ने प्रवेश किया। उसकी पोशाक बहुत सादी थी। पैर में हिन्दुस्तानी जूता था। धोती कुछ मोटी थी। उसमें किनारी अवश्य थी पर इतनी पतली थी कि उसका पता चलाना कठिन था। कमीज़ और कोट एक ही कपड़े के बने थे। अन्तर केवल उनकी बनावट में था। कंधे पर एक तौलिया थी। सिर पर एक सफेद दोपलिया टोपी। उस भोले युवक को यह भी न मालूम था कि तौलिया कंधे पर रख कर चलने की चीज नहीं है। उसके शरीर का रंग गोरा था, चेहरा गोल था और उसकी गढ़न सुन्दर थी। उसकी आंखों से सादगी और भोलापन टपकता था। टोपी के नीचे लम्बी और काली चोटी की गाँठ झलक रही थी। मस्तक पर चन्दन की एक बिन्दी थी। उसे देख कर कोई भी इस बात की कल्पना नहीं कर सकता था कि उसमें कोई ऐब होगा।

उस युवक को देखते ही गंगा ने कहा—लो वे आगये।

चन्द्रशेखर ने आँख उठा कर आगन्तुक की ओर देखा। उसे देखते ही उनके हृदय में एक प्रकार की वेदना हुई। दो दिन पहले उन्होंने उसके ऊपर दो रुपया जुर्माना कराया था। अगर कोई दूसरा मास्टर होता तो वह चन्द्रशेखर का जानी दुश्मन बन जाता। पर इस भोले युवक को मानो इस बात की कुछ

परवाह ही नहीं थी। चन्द्रशेखर ने अपने दिल में विचारा कि उसका कसूर भी बहुत बड़ा नहीं था। स्कूल के जिस कमरे में चन्द्रशेखर का क्लास लगता था उसी के बगल में उस युवक का भी क्लास था। उसके क्लास में बड़ा शोर मचता था। एक बार चन्द्रशेखर ने इसी बात को लेकर प्रधान अध्यापक से उसकी शिकायत कर दी थी जिसके फल स्वरूप बेचारे को ऊपर कहा २) का जुर्माना भुगतना पड़ा था। आज वही युवक सारा भेद भाव भूल कर चन्द्रशेखर की मदद को आया है। इससे बढ़ कर और उदार हृदयता क्या हो सकती है। यही सोच कर चन्द्रशेखर दुःखी हुए थे। उन्होंने सिर नीचा करके कहा—देवधारी!

आगन्तुक का नाम देवधारी ही था। उसने आगे बढ़ कर कहा—हाँ पंडित जी! कैसी तबियत है?

चन्द्रशेखर—तबियत तो अच्छी है। और तो कहीं कुछ मालूम नहीं होता। केवल जाँघ में दर्द होता है। शायद जाँघ के सिवाय और कही उस गाय का पाँव नहीं पड़ा। पर अब उस दर्द का उतना असर नहीं रहा जितना मेरे हृदय में दर्द हो रहा है।

देवधारी इस बात का अर्थ समझ न सका। उसने घबड़ा कर पूछा—हृदय में कैसे दर्द होने लगा। यहाँ आने पर तो कोई घटना नहीं होगई।

चन्द्रशेखर—घटना क्या होगी। मैं इस बात पर दुःखी हो रहा हूं कि मैंने उस रोज नाहक तुम्हारी शिकायत की। तुम बड़े अच्छे आदमी हो।

देवधारी—शिकायत तो जो भी होता वही करता। मेरे दर्जे में निस्सन्देह ऐसा शोर हो रहा था जो स्कूलों के पास पड़ोस में
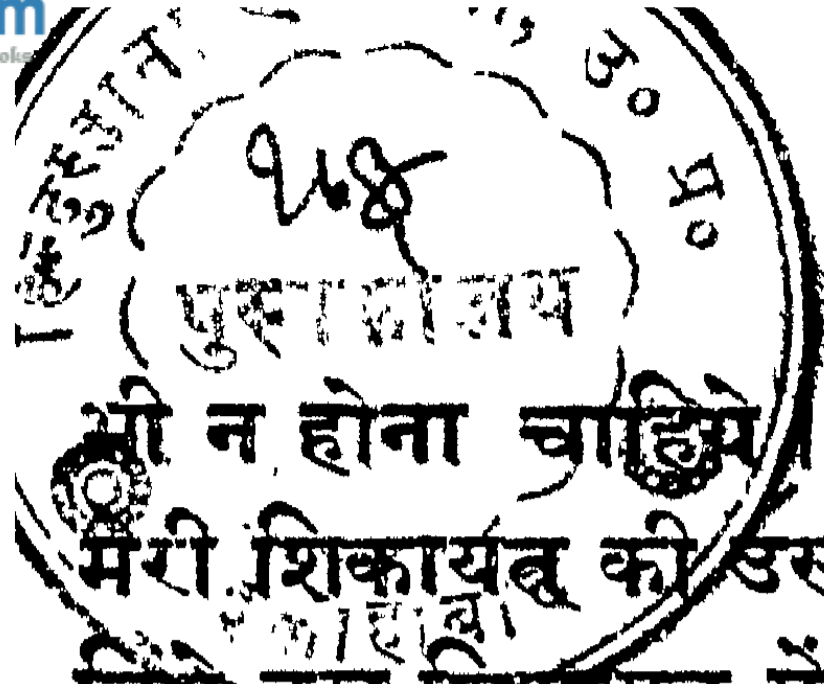
भी न होना चाहिये। मगर पंडित जी ! जिस रोज से आपने मेरी शिकायत की उसी दिन से शोर कुछ कम हो चला है। इस लिये उस शिकायत में मुझे तो कोई अनौचित्य नहीं जान पड़ता।

चन्द्रशेखर—तुम अपने ऊपर किये गये किसी भी अन्याय को बुरा न कहोगे। यह मुझे आज ही नहीं वरन् पहले से ही मालूम था। तुम बड़े सीधे हो। तुम्हारी सिधाई की सब प्रशंसा करते हैं।

देवधारी—यह सब आप की कृपा है। वैसे तो मैं किसी लायक नहीं हूँ।

गङ्गा ये सारी बातें चुपचाप सुन रही थी। उसने देवधारी से पूछा—पंडित जी ! आप लडकों को सजा नहीं देते क्या ? ज़रा डाट में रक्खा कीजिये तो काहे को शोर हो।

देवधारी—माता ! मैं यह जानता हूँ कि डाट डपट से लड़के चुप रहेंगे ! पर मैं सोचता हूँ—क्यों ऐसा करूँ। जो पढ़ते हैं वे पास होते हैं जो नहीं पढ़ते वे फेल होते हैं। इस प्रकार वे दंड या पारितोषिक तो स्वयं ही प्राप्त कर लेते हैं। फिर मैं बीच में क्यों किसी को मारूँ पीटूँ। यदि मैं ने किसी लडके को मारा और वह न पास हुआ तो उसे दोहरी सजा मिली या नहीं।

गंगा—यह तो ठीक है मगर गुल गपाड़ा होने से आपकी बदनामी कितनी होती होगी ?

देवधारी—बदनामी तो मारने पीटने में भी हो सकती है। और यदि न हो तो भी मुझसे बालकों पर हाथ नहीं उठाया जाता। मुझे अपने लड़कपन की एक बात याद है, तब बच्चे जितना ही गुलगपाड़ा करते थे उतना ही अच्छा समझा जाता था।

गंगा—लेकिन तब बच्चे पीटे भी खूब जाते रहे होंगे।

देवधर—पीटे भी जाते थे। मैं भी पीटा गया था।

इसी बीच में बाहर से किसी ने कहा—बाबू जी गाड़ी कब तक खड़ी रहेगी।

अब चन्द्रशेखर को मालूम हुआ कि देवधारी गाड़ी लेने गया था। उन्होंने पड़े ही पड़े कहा—बस अब चलते ही हैं।

गङ्गा ने प्रधान अध्यापिका के कमरे में जाकर उस दिन की छुट्टी ली और चन्द्रशेखर के लिये उन्होंने जो कमरा खाली करा दिया था उसके लिये अनेकानेक धन्यवाद दिये। रतनमाला को भी उस दिन की छुट्टी मिल गई। सब लोग गाड़ी में आ बैठे कोचवान ने लगाम हाथ में ली और घोड़े चल पड़े।

रास्ते में चन्द्रशेखर ने देवधारी की प्रशंसा के पुल बाँध दिये। वह कैसा सीधा है? लड़के उससे कैसे खुश रहते हैं? सब मास्टरों से उससे कैसा मेल रहता है? इत्यादि बातों का विवेचन करते हुए वे अपने घर के पास पहुँचने पर बोले—देवधारी बिलकुल देवता है। मुझे आज इसी लिये चोट लगी थी कि मैं इस देवता को पहिचानूँ।

जैसे ही गाड़ी घर के पास खड़ी हुई वैसे ही देवधारी ने बिदा माँगी। गङ्गा ने शाम तक ठहरने का अनुरोध किया पर देवधारी जमुना पार अपने गाँव जाने का इरादा कर रहा था। इसलिये वह न ठहर सका।

जब देवधारी चला गया तो गङ्गा ने चन्द्रशेखर के कान में कहा—यदि ऐसा ही सीधा कोई लड़का मेरी रतनमाला के लिये मिल जाता तो क्या बात थी। चन्द्रशेखर ने भी उसी तरह धीरे से कहा—यदि यही मिल जाय तो?

गङ्गा ने रतनमाला की ओर देख कर मुस्करा दिया।

पांचवां परिच्छेद

---:*:---

शायद ही कोई ऐसा हो जिस पर स्त्री सौन्दर्य्य का प्रभाव न पड़े। देवधारी भी इससे वञ्चित न रहे। रतनमाला को देख कर जो दशा नूरमुहम्मद की हुई थी वही देवधारी की भी होगई। पर देवधारी नूरमुहम्मद की भाँति न कोई छल बल जानते थे, न वे उतने धनी ही थे। और न वे अंग्रेजी ही पढ़े थे।

उनकी तरफ से जो बात वकालत कर सकती थी, वह यही थी कि वे भी ब्राह्मण थे। और ऐसे ब्राह्मण थे जिसके साथ रतनमाला का ब्याह हो सकता था। पर क्या केवल ब्राह्मण होने से यह सम्बन्ध हो सकता है? ब्राह्मण तो सैकड़ों हैं। रतनमाला के साथ ब्याह करने के लिये यह परम आवश्यक है कि आदमी अच्छी अँग्रेजी पढ़ा हो और उसकी रहन सहन भी अंग्रेजी ढ़ँग की हो। देवधारी में इन बातों का सर्वथा अभाव था। इसी लिये वे अपने को रतनमाला के अयोग्य समझते थे।

वे अपने को इस बात के लिये भी धिक्कार रहे थे कि उनके दिल में रतनमाला के प्रति प्यार क्यों पैदा हो गया। एक ब्राह्मण के लड़के में ऐसे ऐब का होना क्या क्षम्य हो सकता है? उन्होंने संस्कृत में आचार्य की परीक्षा पास की थी। दर्शन शास्त्र का अध्यपन किया था। पूजा पाठ में भी उनका बड़ा समय लगता था। प्राणायाम इत्यादि भी वे खूब करते थे।

पर किसी ने उनकी सहायता न की। लाख यत्न करने पर भी रतनमाला हृदय से दूर न हो सकी।

जब वे ठाकुर जी की पूजा करने बैठते तो उन्हें रतनमाला का ध्यान आ जाता। स्कूल में जाते तो सोचते कि इसी प्रकार रतनमाला भी स्कूल में आई होगी। अपनी इस कमजोरी पर उन्हें कभी कभी बड़ा क्रोध भी आ जाता। वे उपवास करते। घंटों पानी में बैठे रहते। पर रतनमाला से छुटकारा न पाते। उनकी दैनिक चर्य्या में बड़ा परिवर्तन होने लगा। वे देर से उठने लगे और देर से सोने भी लगे। कभी खाते कभी न खाते। अन्त में कहीं उन्हें एक श्लोक मिल गया उसे गा गाकर वे अपनी दैनिक चर्य्या में जो परितवर्तन हुआ था उसकी पुष्टि करने लगे। श्लोक यह था।

विधुराजमुखी मृगराजकटी
गजराजविराजित मन्दगतिः

यदि सा ललना हृदयं गमिता
क्व जपः क्व तपः क्व समाधिविधिः

ठीक है। चन्द्रमा के समान मुख वाली, सिंह के समान कमर वाली और हाथी के समान धीमी गति से चलने वाली ललना यदि हृदय में प्रवेश कर गई तो फिर कहाँ जप, कहाँ तप और कहाँ समाधि की विधि? इसमें बेचारे देवधारी का दोष ही क्या है?

जब पुरुष-हृदय स्त्री-प्रेम के लिये चञ्चल होउठता है और उसे नहीं पाता तो उसकी विवेक-शक्ति चली जाती है और वह आलसी बन जाता है। देवधारी की भी यही दशा हुई। उन्होंने अपने दरवाजे पर स्थित ठाकुर जी की पूजा करनी एक दम

बन्द कर दी ! नहाने में भी अब उन्हें बहुत देर नहीं लगती। कुछ पढते पढाते भी नहीं।

देवधारी के माता पिता उनसे पहले ही से अप्रसन्न रहते थे। अब और रहने लगे। नीचे के वृत्तान्त से पाठकों को इस अप्रसन्नता का कारण स्पष्ट हो जायगा।

देवधारी के पिता का नाम बैजनाथ मिश्र था। पर लोग उन्हें केवल मिश्र जी ही कह कर पुकारते थे। पहले के वे अयोध्या के रहने वाले थे। पर अब प्रयाग से थोड़ी दूर पर नैनी से मिले एक छोटे से गाँव माघी में रहते हैं। माधी करीब ५०० से ऊपर बीघों का एक अच्छा मौजा है। यह मौजा पहले तिवारियों का था। पर तिवारियों के वंश में एक वृद्धा के सिवाय और कोई न रह गया था। यह वृद्धा बैजनाथ मिश्र की नानी थी। अतएव बैजनाथ माघी के जिमींदार हुये। अयोध्या में बैजनाथ मिश्र की कोई निजी सम्पत्ति न थी। वे एक मन्दिर के पुजारी थे। जब उन्हें माघी की जिमींदारी मिली तो उनकी इच्छा हुई कि एक दम माघी चले जाँय पर उनकी स्त्री राजरानी इस बात पर राजी न हुई। उसका कहना था कि माघी की जिमींदारी तिवारियों को ही नहीं सही तो हमको कैसे सहेगी। वहाँ जाना ठीक नहीं है। पर बैजनाथ केवल स्त्री की इन बातों में पड़ कर मुफ्त में मिली जिमींदारी छोड़ना न चाहते थे। अतएव उन्होंने वृद्धा नानी के संतोष के लिये अपने छोटे लड़के रामधारी को भेज दिया। रामधारी देवधारी से दो वर्ष छोटा था। बुड्ढे लोग बच्चों को पाकर जितने प्रसन्न होते हैं उतने जवान से नहीं होते। बैजनाथ की वृद्धा नानी भी रामधारी को पाकर बहुत प्रसन्न हुई। उसने उसके पढ़ाने के वास्ते प्रयाग में प्रबन्ध कर दिया। बालक रामधारी वृद्धा का मनोविनोद करता हुआ अंग्रेजी पढ़ने लगा।

आगे चल कर वह वृद्धा रामधारी को इतना प्यार करने लगी कि उसने माधी की जिमीदारी उसी के नाम लिखवा दी। अयोध्या के पुजारियों के बीच में रहने के कारण देवधारी अंग्रेजी तो न पढ़ सका पर उसने संस्कृत की अच्छी शिक्षा पाई।

जब वृद्धा नानी का देहान्त होगया तो बैजनाथ मिश्र को जिमीदारी पर कब्जा करने और नानी का श्राद्ध इत्यादि करने माधी आना पड़ा। देवधारी और राजरानी भी उनके साथ आये।

बहुत दिन के बिछुड़े लड़के रामधारी को पाकर राजरानी बहुत प्रसन्न हुई। उसने देखा कि माधी में जो घर है वह अयोध्या के मन्दिर की एक कोठरी और दालान से कई गुने अच्छा है। नौकरों, चाकरों की भी कमी नहीं है। चारों तरफ मलिकाना है। रामधारी ने माता को पहले ही रोज घर दिखाया। घर पक्का तो नहीं था। पर किसी पक्के मकान से कम भी न था। कच्ची मिट्टी का दो मंजिला मकान था। लम्बे लम्बे बरान्डे थे। नीचे के कमरे में सील थी पर ऊपर के कमरे काफी हवादार और रहने लायक थे। सदर द्वार का फाटक बहुत बड़ा था और उसके किवाड़ बहुत मजबूत और बड़े थे। इतने विशाल किवाड़ शायद उसने अयोध्या के किसी मन्दिर में भी न देखे थे। स्त्रियों के आने जाने के लिये एक जनाना द्वार अलग था। बाहर की तरफ एक लम्बी चौपाल थी जिसमें दो कोठरियाँ थीं। इन कोठरियों में कोई आये गये परदेशी आकर ठहरा करते थे। दूर से देखने से तो वह एक ही मकान जान पड़ता था पर अन्दर से ऐसा बना था कि उसमें दो कुटुम्ब अलग-अलग रह सकते थे। दो बड़े-बड़े आँगन थे। एक से दूसरे में जाने का रास्ता भी था।

राजरानी ने मकान देखते देखते यह सोच लिया कि एक हिस्से में रामधारी रहेगा और दूसरे में देवधारी।

सामने की चौपाल के आगे एक बड़ा मैदान था। इस मैदान के सिरे पर एक विशाल छप्पर ऊँची ऊँची बल्लियों पर चढ़ा था। जिसके नीचे कुछ बैल बंधे थे। भैंसों और गायों के रहने के लिये मकान के दूसरे खंड में प्रबन्ध था। जहाँ बैलों के लिये छप्पर चढ़ा था वहाँ से बाएँ हाथ की ओर एक कुआँ था। कुएँ की जगत पक्की थी। इस पर प्रति दिन फुरसत के समय गाँव वाले आकर बैठा करते थे। पानी भरने वालों की भीड़ भी सबेरे शाम खूब लगती थी। कुएँ से मिला हुआ एक मन्दिर था। इसमें शिव जी विराजमान थे। वैजनाथ ने इसी मन्दिर में ठाकुर जी की भी एक मूर्ति स्थापित कर दी और देवधारी को उनकी खिदमत में नियुक्त कर दिया।

माधी ने राजरानी के सामने इतने प्रलोभन उपस्थित कर दिये कि उसने अयोध्या लौटने का नाम तक न लिया। तिवारियों के वंश वृक्ष का रामधारी पर कोई प्रभाव न पड़ा था। यह देख कर उसने निश्चय कर लिया कि ईश्वर ने तिवारियों का जन्म राजरानी के ही लिये किया है। भला राजरानी सी धर्म परायणा और सारी उम्र पँजीरी प्रसाद फाँकने वाली महिला पर राम जी इतनी भी दया न करते ?

अयोध्या में राजरानी को देवधारी बहुत प्रिय था। क्योंकि वह बाजार से सौदा लाता था, कुएँ से पानी खींचता था, घर की सफाई करता था। यहाँ वह बात न रह गई। पानी भरने, सफाई करने, सौदा लाने, सब बात के लिये नौकर मौजूद हैं। अब वह देवधारी को प्यार करके क्या करेगी। अब राजरानी के हृदय

में रामधारी के प्रति प्यार की धारा उमड़ने लगी। रामधारी अपनी जान हथेली पर रख इस भूतों के डेरे में रहने आया था। उसी ने उस बुड्ढी नानी को खुश करके सारी सम्पति अपने नाम लिखवा ली। और उसने खूब पढ़ा भी। उसके पढ़ने का मुकाबिला क्या कोई कर सकता है? जो अंग्रेजी विद्या बैजनाथ के बाप दादा ने नहीं पढ़ी थी वह रामधारी ने पढ़ी है। अब वह मालूम नहीं कितने ऊँचे दरजे की नौकरी पावेगा? अंग्रेजी पढ़ कर लोग बादशाही करते हैं! यह बात झूठी नहीं है।

उसने सोचा देवधारी यहाँ बेकार पड़ा रह कर क्या करेगा? एक आदमी अयोध्या के मन्दिर में भी तो चाहिये! अच्छा है देवधारी वहीं चला जाय। उसने बैजनाथ से भी अपना अभिप्राय प्रकट किया। पर बैजनाथ ने सोचा कि अयोध्या के पुजारियों में बहुत चालाक आदमी की आवश्यकता है। देवधारी से भोंदू की वहाँ गुजर नहीं हो सकती। इसी से उन्होंने कुएँ के मन्दिर में जैसा—कि ऊपर कहा जा चुका है—देवधारी को लगा दिया और राजरानी को समझा बुझा कर चुप कर दिया।

अब देवधारी को यह मालूम हुआ कि उसके बेकार रहने से माता दुखी रहती है तो उसने प्रयाग में नौकरी तलाशनी शुरू की और ईश्वर की कृपा से हिन्दू हाई स्कूल में २५) महीना पर एक जगह भी मिल गई। माता देवधारी की २५) की ही नौकरी से बहुत सन्तुष्ट होती यदि रामधारी उसी साल मैट्रिक पास करने के बाद पुलिस ट्रेनिंग में न ले लिया जाता। एक साल के बाद रामधारी पुलिस का दरोगा होगा। तनख्वाह तो जो पावेगा वह पावेगा ही इधर उधर से भी न

मालूम कितना रुपया लाकर घर भर देगा। पर देवधारी वहीं जनम भर २५) में ही पड़ा रहेगा। इससे अच्छा तो यही है कि वह अयोध्या चला जाय।

माता का देवधारी से रुष्ट होने का एक कारण और है। वह भी बड़ा मजेदार है। सुनिये—बड़ा भाई होने के कारण देवधारी का विवाह पहले होना चाहिये। बिना देवधारी का विवाह हुए रामधारी का विवाह नहीं हो सकता और यदि हो भी जाय तो लोग उसे अनुचित कहेंगे। पर जो लोग विवाह करने आते है वे रामधारी को ही पसन्द करते हैं क्योंकि उसे अच्छी नौकरी भी मिली है और जायदाद भी उसी के नाम है। जब बैजनाथ कहते हैं कि बिना देवधारी का विवाह हुए रामधारी का विवाह न होगा तो लोग लौट जाते हैं।

बिना पतोहू के इतना बड़ा घर सूना है। पर देवधारी जब तक है तब तक क्या उसका घर आबाद हो सकता है। एक रोज राजरानी ने अपने पति से कहा—देवधारी का ब्याह नहीं हो सकता। उसके लिये ब्रह्मा ने स्त्री नहीं बनाई। बनाते तो उसका विवाह ज़रूर हो जाता।

बैजनाथ—तब क्या किया जाय?

राजरानी—रामधारी का ब्याह कर लो।

बैजनाथ—लोग क्या कहेंगे?

राजरानी—लोगों के कहने का जब ब्रह्मा ही ने कोई ख्याल नहीं किया तो हम लोग क्या कर सकते हैं।

बैजनाथ—अब यदि कोई आयेगा तो कर लेंगे।

इसके कुछ दिन बाद रामपुर के किसी पंडित की एक कन्या के साथ रामधारी का ब्याह निश्चित होगया। राजरानी सम-

झती थी कि छोटे भाई के विवाह का समाचार सुन कर देव धारी दुखी होगा। पर उसे बड़ा विस्मय हुआ जब उसने देखा कि देवधारी बड़ा प्रसन्न है।

दूसरे दिन देवधारी ने ठाकुर जी के मन्दिर में जाकर प्रार्थना की—मैं रतनमाला को प्यार कर चुका हूं। अतएव अब मैं किसी अन्य स्त्री को प्यार करने का अधिकारी नहीं हूँ। हे प्रभो! बिवाह करने अब कोई न आवे। और मुझे भी ऐसा बल दो कि बिना व्याह के मैं पवित्रता पूर्वक जीवन निर्वाह कर सकूँ।

छठा परिच्छेद

संसार में नूरमुहम्मद का जो सब से बड़ा दुश्मन था वह बरसात का मौसम था। जब जब पानी बरसता नूरमुहम्मद क्रोध से लाल हो जाता। बादलों की ओर घूरता, दाँत पीसता पर कुछ नतीजा न निकलता। बादल गरज कर नूरमुहम्मद को डाट देते, बिजली चमका कर उसकी आँखें चकाचौंध कर देते और पानी की बड़ी-बड़ी बूँदें गिराकर उसकी हँसी उड़ाते। नूरमुहम्मद की धारणा थी कि वह बड़ा बली है। दिन दोपहर जिसकी चाहे उसकी बेइज़्ज़ती कर सकता है। पर बादलों को देखकर उसकी यह धारणा वर्षा के ही बतासों की भाँति नष्ट हो गई। जड़ बादलों का भी वह कुछ नहीं कर सकता।

बरसात से नूरमुहम्मद को जो इतनी चिढ़ हो गई थी, उसका कारण वही नाला था। न पानी बरसता न नाला बढ़ता। और जब नाला न बढ़ता तो रतनमाला उसके बाग में जरूर आती। किन्तु बरसात कब तक रहेगी? अधिक से अधिक चार महीने। चार महीने का समय बिता देना कोई कठिन बात नहीं है। उसके बाद नाला सूख ही जाएगा और रतनमाला बिना आए न रहेगी।

आदमी जैसा सोचता है वैसा प्रायः होता नहीं है। बरसात बीतने पर इस बात को नूरमुहम्मद ने बड़े दुःख के साथ अनु-

भव किया क्योंकि नाला सूख जाने पर भी रतनमाला अब उसके बाग में फूल लेने नहीं आती।

बरसात के दिनों में नूरमुहम्मद की दादी रतनमाला के यहाँ रोज सबेरे शाम फूल पहुँचाती थी। और घंटों बैठ कर उससे बात चीत भी करती थी। रतनमाला के माँ बाप नूरमुहम्मद की इस नौकरनी को बड़ी सीधी सी समझते थे। उन्हें स्वप्न में भी इस बात का पता न था कि वह बड़ी कुटिल हृदया है और इसके द्वारा एक रोज रतनमाला का सर्वनाश हो सकता है। इस लिये वे इस नौकरानी को घंटों बैठकर रतनमाला से बात करने में कोई बाधा न डालते थे। रतनमाला के पास बड़ी देर तक बैठने का इस बुढ़िया ने भी एक विचित्र कारण सोच रक्खा था। वह कहा करती थी—मेरे एक लड़की थी। रतनमाला को देखकर मुझे उसकी याद आ जाती है। वह शक्ल सूरत में बिलकुल इसी तरह की थी। उसे भी फूलों से बड़ा प्रेम था। ईश्वर ने उसे उठा लिया। नहीं तो आज मैं क्यों ऐसी बातें सुनतीं कि मेरा इस संसार में कोई नहीं है। दादी की ऐसी करुण बातें सुनकर चन्द्रशेखर और गङ्गा दोनों द्रवित हो जाते थे और कहते—दादी ! (नूरमुहम्मद की नौकरानी को प्रायः सब लोग दादी ही कहते थे) रतनमाला तुम्हारी ही लड़की है। रतनमाला भी दादी के बनावटी प्रेम में आगई थी और उसे प्यार करने लगी थी।

दादी इस परिस्थिति से पूरा लाभ उठा रही थी। उसे विश्वास हो गया था कि वह रतनमाला को अपने चंगुल में फाँस कर नूरमुहम्मद का काम सिद्ध कर लेगी। जब वह रतनमाला के पास बैठती और कोई दूसरा सुनने वाला न होता तो सदैव नूरमुहम्मद की चर्चा छेड़ देती—वह कैसा सुन्दर है ? कैसा धनी है ? कैसा उदार है ? युवतियाँ उसके प्रेम

के लिये कितना लालायित रहती हैं ? इत्यादि बातों का अच्छा वर्णन करती। कभी कभी मौका पाकर यहाँ तक कह बैठती— ऐ ! रतनमाला ! बेटी !! तुझे वह बहुत प्यार करता है। तेरे लिये अपने हाथों से फूल तोड़ता है। उसका तेरा ज़रूर कोई पूर्व जन्म का सम्बन्ध है। ऐसी बातें सुन कर रतनमाला लजा जाती थी और अपना सिर नीचा करलेती थी।

नूर मुहम्मद की प्रशंसा सुनते सुनते गंगा और चन्द्रशेखर भी उसे प्यार करने लगे थे। तिथि त्योहार के दिन गंगा नूर मुहम्मद को अपने यहाँ बुलाती तो वह दौड़ता आता था। चन्द्रशेखर का भी उसके यहाँ खूब आना जाना होने लगा था। इस तरह नूरमुहम्मद को भी कभी कभी रतनमाला के देखने का मौका मिल जाता था।

जहाँ ऐसी घनिष्टता है वहाँ अविश्वास का कोई कारण न होना चाहिये। फिर भी न मालूम क्यों नाला सूख जाने पर भी गङ्गा अब रतनमाला को उस पार नहीं जाने देती। कई बार दादी ने रतनमाला से कहा भी कि चलो बाग की सैर कर आओ, बड़ी बहार है। पर गङ्गा ने यह कह कर कि लड़की सयानी हो गई है। सयानी लड़कियों का इधर उधर फिरना अच्छा नहीं टाल मटूल कर दिया। एक रोज दादी ने रतनमाला से कहा— बेटी ! मैं जरा देहात जा रही हूं। तीन चार दिन में आऊँगी इस समय में तुम अपने लिये स्वयं फूल तोड़ लाना कोई डर की बात नहीं है।

इसके उत्तर में रतनमाला ने कह दिया—अच्छा तोड़ लाऊँगी।

पर दादी के चले जाने पर उसने बाग की तरफ झाँका तक

नहीं। नूरमुहम्मद उसका इन्तजार ही करता रह गया। तीन चार दिन में दादी फिर फूल लेकर आई। और उपाय ही क्या था। दादी की गैरहाजिरी में रतनमाला फूल तोड़ने क्यों नहीं गई। जब इसका कारण पूछा गया तो रतनमाला ने यह कह कर कि अम्मा ने मने कर दिया था, मुस्करा दिया। यह सुनकर दादी चुप हो रही।

जब नूरमुहम्मद ने देखा कि रतनमाला उसके बाग की तरफ किसी तरह नहीं आती तो उसने अंग्रेजी में एक पत्र लिखा—

प्यारी रतनमाला,

तुमने तो इस तरफ का आना ही छोड़ दिया। बाग में घूमने से कितना लाभ होता है, यह तुम जानती हो। तुम्हारे पड़ोस में मेरा बाग है और तुम उससे कुछ लाभ न उठाओ मुझे यह देख कर बड़ा दुःख होता है। बाग में कोई नहीं रहता मैं भी आजकल प्रायः बाहर ही रहता हूं चाहो तो अपनी माँ को भी साथ ला सकती हो। यदि तुम्हारी माँ न आवे तो तुम स्वयं दादी के साथ बाग की हवा खा सकती हो। दादी को मैंने कह दिया है। यदि तुम आओगी तो वह तुम्हारे साथ रहेगी।

तुम्हारा
नूरमुहम्मद।

यह पत्र उसने दादी के हाथ रतनमाला के पास भेज दिया पत्र में उसने कोई गुप्त बात नहीं लिखी थी। इस लिये वह निश्चिन्त था। पत्र में उसने जान बूझकर कोई गुप्त बात न लिखी थी। क्योंकि उसे डर लगा था कि कहीं ऐसा न हो कि रतनमाला का पत्र उसके माता पिता देखलें और गड़बड़ी

पैदा हो जाय। नाम के पहले पाठक 'प्यारी' शब्द देख कर आश्चर्य्य करेंगे पर अंग्रेजी में पत्र लिखने की ऐसी ही प्रथा है। अतएव अंग्रेजी में नाम के पहले केवल इस शब्द पर किसी प्रकार का सन्देह नहीं किया जाता।

नूर मुहम्मद यह सोच रहा था कि उसका पत्र पढ़ कर या तो रत्नमाला उसके बाग में आएगी या न आने का कोई कारण लिख कर भेजेगी। पर रत्नमाला ने दो में से एक भी न किया। उसने दादी से कह दिया—इम्तिहान बहुत करीब है। घूमने जाने की फ़ुरसत नहीं मिलती। इम्तिहान के बाद घूमने जाया करूँगी। नूर साहब मेरा बड़ा खयाल रखते हैं। इसके लिये उनको धन्यवाद है।

दादी ने ज्यों का त्यों यह जबानी उत्तर नूरमुहम्मद को सुना दिया। नूरमुहम्मद को इससे कुछ सन्तोष न हुआ। तब उसने दूसरा पत्र लिखा पर उसका भी उसे कोई उत्तर न मिला। फिर तीसरा पत्र लिखा इस बार भी रत्नमाला चुप रही। रत्नमाला के चुप रहने का यह परिणाम हुआ कि नूरमुहम्मद रोज उसे एक प्रेम पत्र लिखने लगा। इन लगातार प्रेम पत्रों का रत्नमाला पर क्या प्रभाव पड़ा इसका अनुमान पाठक इसी से कर सकते हैं कि वह इन सारे पत्रों को छिपाकर अपने सन्दूक में रखने लगी और उन्हें बड़े चाव से पढ़ने लगी तथा नित्य नये पत्र के लिये उत्सुक रहने लगी। उसे कई बार इच्छा हुई कि पत्रोत्तर दें। पर ऐसा करने की उसकी हिम्मत न पड़ी। अन्त में नूरमुहम्मद ने एक लम्बा चौड़ा पत्र लिखा। पर पत्र भी अंग्रेजी में था। नीचे उसका हिन्दी अनुवाद पाठकों के सम्मुख उपस्थित है।

मेरी प्यारी रतनमाला,

मेरी समझ में नहीं आता कि मैं किस प्रकार तुम्हारे सामने अपना हृदय खोल कर रक्खूँ। क्या तुम्हें इस बात का विश्वास नहीं है कि मैं तुमको जी जान से प्यार करता हूं। जब से मैंने तुमको देखा है तभी से मैं तुम्हारा गुलाम हो गया हूं। मेरी आँखे केवल तुमको देखना चाहती हैं। यदि तुम दर्शन देना नहीं चाहती हो तो आओ इन आँखों की ज्योति हर लो। इन्हे फोड़ दो, ये बेकार हैं। मेरे कान केवल तुम्हारी बोली सुनना चाहते हैं और कुछ नहीं। यदि तुम कानों को इस सुख से वञ्चित रखना चाहती हो तो किसी को भेजो इनमें रूई भर दे। मेरा मन—कहना तो नहीं चाहता था पर अब रहा नहीं जाता—तुमको हृदय से लगाने के लिये छट पटा रहा है। यदि तुम इस पानी से निकली मछली की तरह छटपटाते कलेजे पर हाथ रख कर उसे जिलाना नहीं चाहती हो तो तड़पाकर मत मारो। कटार भोंक दो या उस पर कुछ जलते अङ्गारे झोंक दो। यदि तुम्हारे प्रति ऐसा प्रेम करके मेरे हृदय ने कोई अपराध किया है तो उसकी यही सजा है। और यह सजा तुम्हारे ही हाथ से होनी चाहिये। अपराधी को दंड न देना भी एक गुनाह है।

मैं यह जानता हूं कि तुम हिन्दू रमणी हो और मैं मुसलमान हूं। पर मैं यह स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं हूं कि हिन्दू रमणी को मुसलमान से ब्याह न करना चाहिये। कितनी ही हिन्दू रमणियों ने मुसलमानों के साथ शादियाँ की हैं। महारानी योद्धाबाई ने अकबर के बेटे शाहजादा सलीम के साथ ऐसे समय में शादी की थी जब हिन्दू मुसलमानों की परछाईं पड़ने पर भी अपने को धर्म च्युत समझते थे। इतिहास में इस बात के सैकड़ों उदाहरण मिल सकते हैं।

यदि तुम्हें धर्म का भय हो तो मैं कहूंगा कि तुम्हारी शिक्षा अपूर्ण है। धर्म कोई चीज नहीं है। धर्म को ईश्वर ने नहीं बनाया। यह मनुष्यों की रचना है। यदि किसी स्त्री का किसी पुरुष के साथ ब्याह होता है तो वह ईश्वर नहीं करने बैठता विवाह या तो स्त्री पुरुष स्वयं कर लेते हैं या माँ बाप कर देते हैं। धर्म के फेर में पड़ कर कितनी ही औरतें नालायक पति की सेवा करती करती मर मिटती हैं और इसी धर्म को तिलाञ्जुलि देकर कितनी ही रंडियाँ मौज उड़ाती हैं। यदि तुम्हारे दिल में मेरे प्रति प्यार हो तो मेरी बन जाओ। धर्म का और जाति पाँति का कोई खयाल न करो। जिस प्रकार धर्म ईश्वर ने नहीं बनाया उसी प्रकार जाति पाँति भी कोई ऐसी चीज नहीं है जिसे ईश्वर ने बनाया हो। यह सब मनुष्य की माया है। इस माया के चक्कर में जो पड़ता है वह यावत जीवन कष्ट भोगता रहता है। ईश्वर ने संसार में केवल दो चीजें पैदा की है। स्त्री और पुरुष। किसी भी स्त्री का किसी भी पुरुष के साथ सम्बन्ध हो सकता है। यही प्राकृतिक नियम है। गाय बैलों में चिड़ियों में क्या होता। वे शादी ब्याह कुछ नहीं जानते। जिसकी जिससे इच्छा हुई सम्बन्ध कर लेते हैं। आदमी भी एक प्रकार का जानवर ही है और जानवरों की भाँति मनुष्यों में भी स्त्री पुरुष का सम्बन्ध होना अनुचित नहीं है। यदि तुम यह सोचकर कि तुम मुझे भाई कह चुकी हो, मेरे साथ विवाह करने के लिये राजी न हो तो मैं कहूँगा कि तुम बड़े कमजोर दिल की हो। भाई और बहिन का ढकोसला हिन्दुओं में ही है। एक जाति के लोग होते हैं जिनमें सगे भाई बहिनों का ब्याह हो जाता है। चचेरे भाई बहिनों का ब्याह तो मुसलमानों में भी होता है।

प्यारी, मैं बहुत विकल हो रहा हूँ। इश्क बुरी चीज होती है। मेरे ऊपर दया करो। स्त्री का हृदय बड़ा दयालु होता है। तुम भी तो स्त्री ही हो। तुम मेरे भाग्य की विधाता हो, मेरा सर्वस्व हो, मेरा जीवन हो, मेरा प्राण हो, मेरी रक्षा करो। इश्क की लपटों में मेरा शरीर जला जा रहा है। मिलन का पानी छिड़क कर मेरा हृदय शीतल करो। यदि तुम मेरी प्यारी बनने के लिये तैयार हो जाओ तो मैं तुम्हारे माँ बाप को भी राजी कर लूँगा। तुम इस बात की चिन्ता न करो कि मुझसे प्रेम करने के कारण वे तुम्हें त्याग देंगे। अब और क्या लिखूँ, तुम्हें भेटने के लिये भुजाएँ बहुत दिनों से फैली हैं अब अधिक न तरसाओ।

तुमने मेरी एक भी चिट्ठी का उत्तर नहीं दिया। मैं यह नहीं कह सकता कि तुम निष्ठुर हो। संकोच वश ही तुमने ऐसा किया होगा पर यदि इस चिट्ठी का भी उत्तर न दोगी तो मर जाऊँगा। बहुत दुखी हूं। शीघ्र उत्तर देना और पढ़ने के बाद इस पत्र को फाड़ देना।

तुम्हारा गुलाम—

नूरमुहम्मद।

रतनमाला इस पत्र को पढ़ कर घबड़ा गई। नूरमुहम्मद उसको प्यार करता है, यह जान कर वह प्रसन्न होती थी। पर इसका वह यह अर्थ नहीं समझती थी कि नूरमुहम्मद उसके साथ विवाह करना चाहता है।

मुसलमान के साथ विवाह करने का रतनमाला ने कभी अनुमान भी न किया था। उसने सोचा उससे बड़ी भूल हो गई है। नूरमुस्मद की चिट्ठियाँ माता को दिखलाती तो अच्छा होता। पर अब क्या करना चाहिये। इस चिट्ठी को माता को दिखा दे

क्या? नहीं नहीं माता कहेगी पहले की चिट्ठियाँ क्यों नहीं दिखायी तो? रतनमाला बड़े असमञ्जस में पड़ गई। अन्त में उसने सोचा इसका उत्तर दे देने में ही हर्ज क्या है। अतएव उसने उत्तर लिखा।

प्यारे भाई नूरमुहम्मद

यह मैं कैसे कहूँ कि मैं आपको प्यार नहीं करती हूँ। अवश्य मेरे हृदय में आपके प्रति बड़ा स्नेह है। पर वह वैसा ही है जैसा एक बहिन का अपने भाई के प्रति होना चाहिए। भाई बहिन के ब्याह की कल्पना आप कर सकते हैं पर मुझमें ऐसी क्षमता नहीं है। यदि मैं यह भी मान लूँ कि मनुष्यों में पशुओं की भाँति वैवाहिक सम्बन्ध होना चाहिये, तो भी स्वाभाविक कमजोरी वश मैं इस बात को कार्य्य रूप में परिणित करने का साहस नहीं कर सकती। यह जान कर कि ईश्वर ने मनुष्य को नङ्गा पैदा किया है, क्या कोई युवक या युवती नङ्गे होकर जन समुदाय में फिर सकते हैं? मनुष्य के जो पवित्र और दिव्य विचार हैं वे ईश्वर स्वरूप हैं। फिर उन विचारों द्वारा निर्दिष्ट धर्म ईश्वरीय धर्म कैसे नहीं हो सकता। मैं आशा करती हूँ आप मेरे इन शब्दों पर विचार करेंगे और भविष्य में मुझे कोई चिट्ठी न लिखेंगे। ईश्वर आपको सुबुद्धि दे।

आपकी बहिन—रतनमाला।

रतनमाला का पत्र पढ़कर नूरमुहम्मद अवाक रह। उसे स्वप्न में भी यह ध्यान न था कि रतनमाला जैसी सुन्दर है वैसी ही उसमें बुद्धिमत्ता और तर्क-चातुरी भी है।

सातवां परिच्छेद

अम्मा ! अम्मा !! पिता जी आ रहे हैं कहकर रतन-माला मकान की छत पर कूदने लगी। गङ्गा ने बाहर निकल कर देखा कि चन्द्रशेखर इक्के से उतर रहे हैं।

आज चार दिन हुए वे देवधारी के छोटे भाई की शादी में शामिल होने गये थे। इसके पहले वे कभी एक दिन के लिये भी प्यारी पत्नी और बेटी से अलग न हुए थे। उन्होंने मुस्कराते हुए गङ्गा से कहा—मैंने तो इन चार दिनों में बिरह-व्यथा का अच्छा अनुभव किया। तुम्हारे दिन कैसे कटे ?

गङ्गा—चिड़िया होती तो उड़कर तुम्हारे पास पहुँच जाती। मैं भी तुम्हारे बिना तड़फड़ाती रही।

चन्द्रशेखर—ऐसा जानता होता तुम्हें भी लेता चलता।

गङ्गा—और मैं ऐसा जानती होती तो तुम्हें जाने ही न देती।

इस समय रतनमाला आकर बातों में बाधक हो गई। छोटे से बिरह के बाद जो मिलन का सुख था उसका गङ्गा पूर्ण उप-भोग करना चाहती थी अतएव उसने रतनमाला को यह कह वापस कर दिया कि उसे इम्तिहान की तैयारी में एक मिनट भी नष्ट न करना चाहिये। रतनमाला फिर छत पर चली गई। गङ्गा ने पति के हाथों को अपने हाथों में लेकर कहा—बड़ी सुन्दर सुन्दर युवतियाँ देखने को मिली होंगी। तबीयत तो ललच पड़ी होगी।

चन्द्रशेखर ने मुस्कराते हुए कहा—कैसे ललचती? तुम्हारी कृपा से उसमें ललचने की शक्ति ही नहीं रह गई।

गङ्गा ने अभिमान के साथ अपनी एक आँख दबा कर कहा—बातें न बनाओ, मैं कुछ कहूँगी नहीं।

चन्द्रशेखर ने धीरे से पत्नी मुख चूम कर कहा—आज तुम्हारे मन में क्या है?

रतनमाला माता के कहने से ऊपर तो चली गई थी पर बारात की बातें सुनने के लिये वह भी बड़ी उत्सुक थी। अतएव वह फिर नीचे जाकर थोड़ी ही दूर पर छिप माता-पिता की बातें सुन रही थी। जब उपरोक्त बातें हुईं तो उसके हृदय में एक प्रकार की सनसनाहट सी पैदा हुईं और उसका सारा शरीर किसी युवक की बाहु पाश में बद्ध होने के लिये तरंगित हो उठा। उस समय वह यह भूल गई कि नूरमुहम्मद मुसलमान है तथा उसके बाग में उस जैसी सयानी लड़की को न जाना चाहिये।

जब प्रेम की बातें समाप्त हुईं तो रामधारी के विवाह की चर्चा छिड़ी। गङ्गा ने कहा—दुलहिन कैसी है?

चन्द्रशेखर—मज़े की है। न बहुत गोरी ही है न बहुत काली ही है।

गङ्गा—कुछ पढ़ी लिखी भी है।

चन्द्रशेखर—पढ़ना लिखना तो शायद बिलकुल नहीं जानती।

गङ्गा—स्वभाव कैसा है?

चन्द्रशेखर—स्वभाव की बात मैं कैसे बतला सकता हूँ। बाप के देखने से तो मालूम होता है कि अच्छा ही होगा।

गङ्गा—दहेज क्या दिया है ?

चन्द्रशेखर—दहेज की कुछ मत पूछो। झगड़ा होते होते बच गया।

गङ्गा—जितना तय हुआ था उतना दहेज नहीं मिला क्या ?

चन्द्रशेखर—तय तो दो ही हजार हुआ था पर उसने ढाई हजार से ऊपर ऊपर दिया।

गङ्गा—तब तो झगड़ा खड़ा होने का कोई कारण नहीं था।

चन्द्रशेखर—कारण क्यों नहीं था। देवधारी के बाप पाँच सौ और माँगते थे।

गङ्गा—क्यों ?

चन्द्रशेखर—उनकी खुशी।

गङ्गा—तब ?

चन्द्रशेखर—तब क्या ? उसने नहीं दिया।

गङ्गा—फिर इन लोगों ने क्या किया।

चन्द्रशेखर—करते क्या, विवाह तो हो चुका था।

गङ्गा—फिर ?

चन्द्रशेखर—फिर अपना सा मुँह लेकर रह गये।

गंगा मालूम नहीं किस विचार सागर में डूब गई शायद यह सोच रही थी कि इसी प्रकार रतनमाला के विवाह में भी सारी कमाई दहेज के रूप में देनी होगी और पाने वालों को संतोष न होगा।

थोड़ी देर के बाद चन्द्रशेखर फिर बोले—जब लड़की का बाप जितना तय हुआ था उससे अधिक देने पर राजी न हुआ तो ये लोग झगड़ा करने का बहाना खोजने लगे। अन्त में

बहाना भी मिल गया। वह लड़की को बिदा करने के लिये तैयार न था। यह बात इन लोगों को खूब मालूम थी। बस उससे फौरन बिदा कर देने की हठ करने लगे। यदि वह बिदा न कर देता तो कदाचित बिना मार पीट हुए न रहती।

गङ्गा ने एक दीर्घ निश्वास खींच कर कहा—रतनमाला का विवाह कहाँ करोगे?

चन्द्रशेखर—कहाँ बताएँ?

कहीं न कहीं तो बताना ही पड़ेगा। लड़की विवाह योग्य हो है चुकी। इस तरह टाल मटूल करने से कब तक काम चलेगा।

यहाँ पर रतनमाला के कान खड़े हो गये। वह पिता के प्रत्येक शब्द को पी जाने के लिये तैयार होगई।

चन्द्रशेखर ने कहना शुरु किया—रामधारी ही अच्छा लड़का था। पर अब तो उसका व्याह हो चुका। वह पढ़ा भी अच्छा है और उसको नौकरी भी मजे की मिली है। पहले से जानते होते तो उसके लिये हम जरूर कोशिश करते।

गङ्गा—जिन लड़कों का व्याह हो चुका है उनका जिक्र करने से क्या फायदा? इन बातों में व्यर्थ वक्त नष्ट करना ठीक नहीं। कोई मतलब की बात सोचो।

चन्द्रशेखर—देवधारी को क्या तुम पसन्द कर सकती हो!

गङ्गा—पहले तुम बताओ।

चन्द्रशेखर—मैं उसे पसन्द भी कर सकता हूं नहीं भी कर सकता।

गङ्गा—पसन्द क्यों नहीं कर सकते?

चन्द्रशेखर—पसन्द इस लिये नहीं कर सकता कि वह पुराने ख्यालात का पंडित है। आज कल की सभ्यता उसमें छू तक

नहीं गई है। रतनमाला अंग्रेजी में ऐंट्रेंस पास करना चाहती है और उसे अँग्रेजी का एक अक्षर तक नहीं आता। वह कट्टर पुजारी है और रतनमाला के दिल में शिवजी के प्रति जरा भी श्रद्धा नहीं प्रतीत होती। दोनों की प्रकृत में बड़ा भेद जान पड़ता है। ऐसी दशा में कैसे कहा जा सकता है कि यह सम्बन्ध सुखान्त होगा।

गङ्गा—और पसन्द क्यों कर सकते हो?

चन्द्रशेखर—पसन्द इस लिये कर सकता हूँ कि वह अत्यन्त क्षमाशील है, अत्यन्त सीधा है, निष्कपट है। उदार हृदय है, रतनमाला को कभी कष्ट नहीं दे सकता। उससे कोई बात नहीं छिपा सकता और उसके बड़े से बड़े अपराध को क्षमा कर सकता है।

गङ्गा—जब उसमें इतने गुण हैं तो केवल अंग्रेजी न जानने और पुराने ढंग के पुजारी होने के कारण वह रतनमाला के अयोग्य नहीं कहा जा सकता।

चन्द्रशेखर—यह केवल हमारी और तुम्हारी धारणा हो सकती है। सम्भव है रतनमाला हमारे तुम्हारे विचारों से सहमत न हो सके।

गङ्गा—मैं इस बात को मानती हूं कि लड़कियों की शादी में सम्मति अवश्य लेनी चाहिये। लेकिन मेरी रतनमाला इतनी भोली है कि वह अपने शादी के विषय में कुछ नहीं कह सकती। जैसे समस्त हिन्दू लड़कियां आँख मूँद कर माता पिता के विवाह प्रस्ताव को स्वीकार कर लेती हैं, वैसे ही रतनमाला को भी समझो।

चन्द्रशेखर—यदि ऐसी ही बातें सब माताएँ अपनी बेटियों

के विषय में करने लगें तो तुम्हारी इस बात पर कि 'लड़कियों की सम्मति उनके विवाह में ले लेनी चाहिये' कौन अमल करेगा ?

गङ्गा—तो क्या करना चाहिये।

चन्द्रशेखर—यदि देवधारी के छोटे भाई के साथ रतनमाला का विवाह ठहराया जाता तो मैं कह सकता था कि इस संबन्ध में रतनमाला की सम्मति की आवश्यकता नहीं है।

गङ्गा—केवल इसीलिये कि वह अंग्रेजी पढ़ा है ?

चन्द्रशेखर—हाँ ! मेरी समझ में पति और पत्नी को सब बातों में समान जानकारी होनी चाहिये।

गङ्गा—यानी यदि देवधारी अंग्रेजी पढ़ ले तो वह रतनमाला के सब प्रकार से योग्य है ?

चन्द्रशेखर—जरूर !

गङ्गा—और यदि रतनमाला को संस्कृत पढ़ा दिया जाय तो ?

चन्द्रशेखर—तब भी वही बात होगी।

गङ्गा—अच्छा रतनमाला को संस्कृत पढ़ाना शुरु कर दो।

चन्द्रशेखर—कैसे करदें।

गङ्गा—घर पर पढ़ाने के लिये कोई अध्यापक मुकर्रर कर लो।

चन्द्रशेखर—और अध्यापिका नहीं ?

गङ्गा—अध्यापिका नहीं मिल सकती और यदि मिली भी तो वेतन बहुत माँगेगी।

चन्द्रशेखर—अध्यापक तो मेरी निगाह में कोई नहीं है।

गङ्गा—देवधारी ही को क्यों नहीं ठीक कर लेते। इस तरह एक पन्थ दो काम हो जायँगे। अर्थात रतनमाला पढ़ भी जायगी और देवधारी से खूब परिचित भी हो जायगी।

चन्द्रशेखर—तुम्हारी यह कल्पना प्रशंसनीय तो है, पर मालूम नहीं कार्य्य रूप में परिणत होने पर कैसा रूप धारण करेगी ?

गङ्गा—रूप अच्छा ही धारण करेगी जहाँ तक मैं समझती हूं दोनों एक दूसरे को प्यार करने लगेंगे।

चन्द्रशेखर—अच्छी बात है।

इन सब बातों को सुन कर रतनमाला के दिल में तरह २ के विचार उठने लगे। वह देवधारी से पुराने फैशन के पंडित की अपेक्षा नूरमुहम्मद से नवीन सभ्यता के किसी लाड़ले को अधिक पसन्द करती। पर अपनी इस इच्छा को वह माता से जाहिर न कर सकती थी। यदि उसे अंग्रेजी पढ़े हुए लड़के के साथ नहीं विवाहना था तो माता ने उसे अंग्रेजी पढ़ाया क्यों ? आह! पढ़े लिखे माता पिता भी कैसी कैसी गलतियां करते हैं ! रतनमाला की सारी मेहनत, सारी पढ़ाई, मानों व्यर्थ जायगी। नूरमुहम्मद जैसे धनी, मानी और सुन्दर व्यक्ति जिसके लिये तरस रहे हैं वही एक भिखारी ब्राह्मण के हाथों का खेलौना बना दी जायगी। नहीं ऐसा कदापि नहीं हो सकेगा। यदि माता पिता उसके योग्य बर न तलाश सकेंगे तो वह स्वयं इसका प्रबन्ध करेगी। सावित्री की भाँति वह सारे भारत वर्ष में फिरेगी, कोई न कोई मन के माफिक बर अवश्य मिल जायगा। यदि कोई न मिलेगा तो वह कुमारी ही रह कर जीवन व्यतीत कर देगी। यदि उससे कुमारी बन कर न रहा जायगा तो फिर (ईश्वर न करे) अन्त में लाचार होकर मुसलमान हो जायगी और नूरमुहम्मद के बहुत देर से फैले हुए हाथों में अपने को समर्पण कर देगी।

आठवां परिच्छेद

रामधारी का विवाह हो जाने पर जब उसकी स्त्री दुलारी ने गृह में प्रवेश किया तो देवधारी का एक प्रकार से भीतर का आना-जाना बन्द हो गया। अभी तक उसके समय का अधिकांश भाग माता के निकट ही व्यतीत होता था। अयोध्या में तो वह माता की दुम ही बना रहा करता था। पर अब माता उसकी कोई परवाह नहीं करती। नई बहू को पाकर वह समस्त संसार को भूल बैठी है। मालूम नहीं उसके पूर्व जन्म के किन कर्म्मों का फल उदित हुआ है? नया मकान! नयी जिमींदारी! नयी बहू! सुख का कुछ ठिकाना है। यह सुख उसे देवधारी से तो नहीं मिला? फिर वह उसकी क्यों परवाह करे। अब तो रामधारी उसका सर्वस्व है, देवधारी मानो उसका कोई नहीं है।

माता में एकाएक ऐसे परिवर्तन ने देवधारी के हृदय में एक प्रकार की वेदना पैदा कर दी। किन्तु उसने अपने मन को सम-झाया—अब वह लड़का नहीं है, जवान आदमी को घर के बाहर ही रहना चाहिये। माता रामधारी से अधिक बोलती है। बोलना ही चाहिये, उससे बहुत दिनों के बाद मिली है। जब माता ने रामधारी को इस भूतों के डेरे पर भेजा था तो रामधारी को यह देखकर बुरा नहीं लगा था कि वह देवधारी को अधिक प्यार करती है। फिर वही क्यों रामधारी पर माता के अपार स्नेह से दुःखी हो। इससे बढ़कर भी क्या हृदय का कोई ओछापन हो

सकता है ? इसी प्रकार की बातें सोच-सोच कर देवधारी अपने आप को समझाने लगा।

किन्तु हृदय का घाव तर्क के मलहम से नहीं भरता। उसकी दवा तो एक मात्र प्रेम है। इसी प्रेम के लिये देवधारी का हृदय विह्वल हो उठा। वह जहाँ भी जाता इसी की खोज करता। यद्यपि वह स्कूल मास्टर था पर उसका हृदय बालकों का सा था। मातृस्नेह से वञ्चित रह कर बालक सुखी कैसे रह सकता है।

इसी लिये एक दिन जब उससे चन्द्रशेखर ने आकर कहा कि तुम्हें गङ्गा ने बुलाया है तो वह बहुत खुश हुआ। मानों डूबते को तिनके का सहारा मिल गया। वह माता के स्नेह से वञ्चित न रहेगा। गङ्गा इसकी कमी पूरी कर देगी।

उसी दिन वह चन्द्रशेखर के साथ गङ्गा से मिलने गया। गङ्गा पहिले ही से उसका इन्तजार कर रही थी। देवधारी को दूर ही से देख कर बोली—आओ बेटा ! बड़ी कृपा की।

"बेटा" शब्द सुनते ही देवधारी का हृदय गद्गद हो गया। उसने कहा—तुम्हारी कृपा चाहिये, मातेश्वरी ! आज किस लिये याद किया है।

गङ्गा—बहुत दिनों से देखा नहीं था ? और क्या कहूँ।

रतनमाला माता थोड़े से ही फासले पर बैठी हुई सुपारी कतर रही थी। देवधारी को देखते ही उसे उन बातों का स्मरण हो आया जो चन्द्रशेखर के बारात से वापस आने पर माता पिता में हुई थीं। उसने एक घृणापूर्ण दृष्टि से देवधारी की ओर देखा और फिर अपने काम में लग गई।

देवधारी रतनमाला की तीव्र दृष्टि से असमञ्जस में पड़

गये। उनकी समझ में यह न आया कि यह कटाक्ष तिरस्कार से भरा है या अनुराग से। चाहे जिससे भरा हो, है तो वह कटाक्ष ही, और एक ऐसी कुमारी का कटाक्ष जिसके समीप वे अपना सर्वस्व अर्पण कर चुके हैं।

गङ्गा ने कहा—रतनमाला आपसे कुछ कहना चाहती है।

देवधारी कुछ कहने ही वाले थे कि रतनमाला बोल उठी—मैं क्या कहना चाहती हूं, कुछ नहीं।

इसके बाद उसने मुस्करा दिया और अपना मुँह दूसरी ओर को फेर लिया।

देवधारी ने मन ही मन कहा—अवश्य रतनमाला मुझे प्यार करती है, प्यार न करती होती तो एसा क्यों करती। स्त्री का हाव भाव ही तो प्रथम प्रेम का परिचायक होता है।

गङ्गा ने कहा—शरमाती क्यों है? कह!

रतनमाला—क्या तुम चाहती हो कि मैं उठ कर यहाँ से चली जाऊँ।

गङ्गा—घर में मेहमान आए हैं और तू चली जायगी?

देवधारी ने फिर मन ही मन कहा—जरूर कुछ दाल में काला है। लक्षण से तो यही प्रतीत होता है कि रतनमाला मेरी होगी।

गङ्गा ने फिर कहा—अच्छा मैं ही कहे देती हूं। सुनो बेटा! इसके दिल में संस्कृत पढ़ने की इच्छा हुई है, पंडित की लड़की का धर्म भी यही है। यदि तुम कृपा करो तो इसकी यह इच्छा पूरी हो जाय।

रतनमाला—मैं संस्कृत वंस्कृत नहीं पढ़ूंगी। क्या होगा पढ़ कर? मुझे फुरसत भी नहीं है।

गङ्गा—बड़े भाग्य से ये पढ़ाने वाले मिले हैं। न तेरे बाप की टाँग टूटती न इन देवता के दर्शन होते। बेटा इस प्रकार का बोलना अच्छा नहीं है।

दैवधारी—न पढ़ने की इच्छा हो तो जबरदस्ती ठीक नहीं। संस्कृत शास्त्र में कोई अच्छी चीज़ नहीं है।

दैवधारी ने अपनी तरफ़ से वकालत करते देख रतनमाला कुछ लजा गई।

गङ्गा ने कहा—यह सब बहाना मत करो, तुम्हें रतनमाला का गुरु बनना पड़ेगा।

दैवधारी—मुझे आपकी सेवा से कदापि इनकार नहीं है।

गङ्गा—इस कृपा के लिये आपको धन्यवाद है।

फिर उसने रतनमाला से कहा—क्यों बेटी? पढ़ेगी न!

रतनमाला ने मुँह लटका कर कहा—जब तुम्हारी आज्ञा है तो पढ़ लूँगी।

दूसरे दिन से दैवधारी रतनमाला को पढ़ाने लगे। पहले तो तीन चार दिन रतनमाला बड़ी अनिच्छा के साथ पढ़ने बैठी, पर दैवधारी के सरल व्यवहारों ने उसके ऊपर विजय पाई, अर्थात् रतनमाला ने पढ़ने में कुछ कुछ मन लगाना शुरु किया।

जब तक दैवधारी रतनमाला को पढ़ाते थे तब तक गङ्गा प्रायः ऊपर की छत पर रहा करती थी और चन्द्रशेखर शिव जी के मन्दिर में जाकर बैठते थे। ऐसी परिस्थित में यदि नूरमुहम्मद रतनमाला को पढ़ाता होता तो न मालूम क्या हो जाता। पर सरल स्वभाव दैवधारी सिवाय सिर नीचा करके बैठने के कभी हिलते तक न थे। वे मन ही मन कहा करते थे—मैं रतनमाला का गुरु बन कर बैठा हूं। यह मेरी शिष्या है।

शिष्या और पुत्री में क्या कोई अन्तर है। पुत्री न कहूं तो भी छोटी बहिन तो कहना ही होगा। गङ्गा की यह कदापि इच्छा न होगी कि वह रतनमाला को मेरे साथ विवाह दे। मैं किस लायक हूं? फिर मेरे दिल में बुरी भावनायें क्यों उठती हैं। वास्तव में मैं महानीच हूं।

वे अपने को इसी प्रकार नित्य धिक्कारते थे और अपने हृदय को पवित्र रखने की बड़ी कोशिश करते थे, पर सब व्यर्थ जाता था। उनका सिर नीचा न रह सका। एक रोज जब रतनमाला पढ़ रही थी, उन्होंने उसकी ओर देख लिया। आँखें अचल हो गईं और वे पलकों के गिराने की क्रिया को भूल गये। उन्होंने देखा—रतनमाला कैसी सुन्दर है कैसे काले काले केश हैं! कैसा चौड़ा मस्तक है! कैसी बड़ी बड़ी आँखें हैं! कैसी सुन्दर अंगुलियाँ हैं! कैसा सुन्दर शरीर है! इधर आँखें सौंदर्य का इस प्रकार निरीक्षण कर रही थीं उधर हृदय कह रहा था—मालूम नहीं इस रमणी रत्न का अधिकारी ब्रह्मा ने किसे बनाया है? वह भी अवश्य ऐसा ही सुन्दर होगा। सुन्दर न होगा तो भी भाग्यवान तो अवश्य ही बहुत होगा। मैं मानों उसका नौकर हूं। मैं यहाँ पर उस परिचारिका की तरह हूं जो किसी नायक को हृदय से प्यार करती है पर उसे किसी प्रेयसी के पास जाने से रोक नहीं सकती। रोके कैसे? उसमें कोई आकर्षण नहीं रहता। मुझमें भी कोई आकर्षण नहीं है। रतनमाला मेरी कैसे हो सकती है?

वे रतनमाला के देखने में इतने तल्लीन हो रहे थे कि उन्हें यह ध्यान न रहा कि वे कौन हैं और कहां हैं? रतनमाला जब अपना पाठ पढ़ चुकी तो उसने ऊपर की ओर देखा। उसकी

आँखें देवधारी की आँखों से मिलकर चार हो गईं। देवधारी ने झट अपना सिर नीचा कर लिया।

अब रतनमाला को मालूम होगया कि जब वह पढ़ती है तो देवधारी उसकी ओर देखा करते हैं। इस लिये वह सतर्क रहने लगी। और बीच बीच में यह देखने का यत्न करने लगी कि देवधारी उसकी ओर देख तो नहीं रहे हैं। कदाचित देवधारी उसकी इस चेष्टा को जान गये। अतएव वे भी प्रायः पहले की भाँति नत मस्तक रहने लगे। एक रोज रतनमाला ने यह देखने के लिये सिर उठाया कि देवधारी किस तरफ देख रहे हैं तो वह देखती ही रह गई। क्योंकि उस समय वे नीचे की ओर देख रहे थे। रतनमाला ने देखा कि—देवधारी बड़े शान्ति चित्त युवक हैं, बड़े सादे हैं, फैशन का उनमें नाम तक नहीं। उनके चेहरे पर एक प्रकार की दीनता छिटक रही है। नारी हृदय बड़ा उदार होता है। उसे देवधारी के ऊपर दया आगई। उसके हृदय ने कहा—सुन्दरी स्त्री की अभिलाषा प्रत्येक युवक के उर में होती है। वह स्वयं चाहे जैसा हो। देवधारी ने अगर मेरी इच्छा की है तो इसमें उनका बड़ा अपराध नहीं है। यह तो एक स्वाभाविक बात है। फिर भी देवधारी को धन्य है। क्योंकि उन्होंने अपनी इस इच्छा को दबा रक्खा है। मुझसे कभी नहीं कहा कि रतनमाला मैं तुम्हें प्यार करता हूं। नूरमुहम्मद ने मुसलमान हो कर हिन्दू रमणी की इच्छा की है। यह उसकी अनधिकार चेष्टा है, और देवधारी अधिकारी होते हुए भी अपनी चेष्टाओं को संयम की सीमा के बाहर नहीं जाने देते। इस दृष्टि से ये जरूर देवता हैं और यदि इसी दृष्टि से देखा जाय तो नूरमुहम्मद राक्षस प्रतीत होगा। राक्षस चाहे जितना श्री-सम्पन्न, सुन्दर और चतुर हो वह राक्षस ही है। देवत्व को

नहीं पहुँच सकता। देवता अयोग्य होते हुए भी पूज्य है। ईश्वर मुझे बल दे कि पाश्चात्य शिक्षा के कारण मुझमें जो कुरुचि उत्पन्न हो गई है उसे दबा कर मैं अपना हृदय कुसुम इस दीन देवता के चरणों में अर्पण कर सकूँ।

इसी समय देवधारी ने रतनमाला को देखने की इच्छा से अपना सिर ऊपर किया तो देखा कि रतनमाला उन्हें गौर से देख रही है। उन्होंने झट अपना सिर नीचा कर लिया। पर उनके प्यासे नैनों का चित्र रतनमाला के हृदय पटल पर अंकित हो गया।

इस प्रकार दोनों नित्य एक दूसरे की ओर बिना देखे न रहते। जब आँखें आपस में मिल जातीं तो दोनों झट अपना अपना मुँह फेर लेते। धीरे धीरे दोनों एक दूसरे की इस कमज़ोरी से खूब वाकिफ़ होगये।

एक दिन देवधारी रतनमाला की ओर देख रहे थे, कि रतनमाला ने भी उनकी ओर देख दिया। देवधारी हाथ में कलम बनाने का चाकू लिये हुये थे। जल्दी से उन्होंने मुँह फेरा तो चाकू की नोक गाल में लगते लगते बच गई। इस पर रतन-माला हँस पड़ी। मारे लज्जा के देवधारी का मुँह लाल हो गया।

जब रतन माला की हँसी बन्द हुई तो उसने कहा—पुरुष बड़े चोर होते हैं।

देवधारी—पुरुष भी चोर होते हैं और स्त्रियाँ भी। किन्तु जहाँ तक मैं समझता हूं, स्त्रियाँ पुरुषों की अपेक्षा अधिक चोर होती होंगी।

रतनमाला—केवल समझते ही हैं, या इस बात का कोई प्रमाण भी है?

देवधारी—अगर प्रमाण दे सकता तो 'होती होंगी' क्यों कहता ? यही न कहता कि होती हैं ?

रतनमाला—जिस बात का कोई प्रमाण नहीं है उसे न कहना चाहिये। सम्भव है उससे किसी को व्यर्थ में हानि पहुँच जाये।

देवधारी—प्रमाण-रहित बात तत्वहीन होती है। जब कोई तत्व ही नहीं है तो हानि क्या पहुँचेगी।

रतनमाला—आपने अभी जो कहा है कि स्त्रियां पुरुषों की अपेक्षा अधिक चोर होती हैं। इससे क्या स्त्री जाति पर कलङ्क नहीं लगता।

देवधारी—इस प्रकार तो तुम्हारी बात का भी अर्थ लिया जा सकता है।

रतनमाला—मैं अपनी बात को सिद्ध कर सकती हूं। मैं ने जितने भी चोर देखे, सब पुरुष ही देखे। गवर्नमेंट के जेलखानों में जितने चोर हैं मेरी समझ में सब पुरुष ही होंगे।

देवधारी—मैं यह नहीं मान सकता। उनमें स्त्रियाँ भी होंगी।

रतनमाला—स्त्रियाँ होंगी भी तो पुरुषों से कम होंगी।

देवधारी—हाँ ! यह हो सकता है।

रतनमाला—तब तो आप ही की बात से सिद्ध होगया कि पुरुष चोरों संख्या स्त्री चोरों से अधिक है।

देवधारी ने झुंझला कर कहा—स्त्री चोरों से मेरा मतलब उन स्त्रियों से है जो अपने मनोभावों को छिपाये रहती हैं।

रतनमाला—आप की यह बात भी गलत हो जायगी ? क्या आप किसी ऐसी स्त्री का उदाहरण दे सकते हैं।

देवधारी—इस प्रकार के उदाहरण तो आप भी पुरुषों में से नहीं दे सकतीं ?

रतनमाला—क्यों नहीं बतला सकती ?

देवधारी—अच्छा दो एक बतलाओ।

रतनमाला—आप मेरी तरफ क्यों देखा करते हैं ?

देवधारी—देखना क्या चोरी है ?

रतनमाला—जरूर चोरी है। यदि चोरी न होता तो आप भेद खुल जाने पर भी देखते ही रहते, मुँह न फेरने लगते।

देवधारी कुछ लज्जित हुये। फिर बोले—पहिले ही यह बात कह देतीं तो क्यों इतना वाद विवाद होता।

रतनमाला—क्या मैं इसका कारण पूछ सकती हूं ?

देवधारी—कैसा कारण ?

रतनमाला—यही कि तुम मेरी ओर क्यों देख रहे थे ?

देवधारी—तुमने भी तो मेरी ओर कई बार देखा है।

रतनमाला—स्त्री पुरुष की ओर देख सकती है पर पुरुष को स्त्री की ओर न देखना चाहिये।

देवधारी चुप हो रहे। रतनमाला सोच रही थी कि देवधारी कहेंगे—क्यों न देखना चाहिये। पर देवधारी ने कुछ न कहा। शायद नूरमुहम्मद होता तो ऐसी ही दलील दे देता। पर देवधारी इस बात को अस्वीकार न कर सके। वे सोचने लगे कि उन्होंने एक बड़ा अपराध कर डाला है। उनका गला भर आया। आंखों में आँसू आगये।

रतनमाला—बुरा मान गये क्या ?

देवधारी—अपराध भी किया है और बुरा भी मानूँगा।

रतनमाला—बड़ी जल्दी अपराधी बन गये।

देवधारी—क्या तुम क्षमा न करोगी ?

रतनमाला—इतने बड़े अपराध भी कहीं क्षमा किये जाते हैं।

देवधारी—संसार में ऐसा कोई अपराध नहीं है जो क्षमा न किया जा सके।

इसी समय गङ्गा ने ऊपर से कहा—बेटी समय होगया पढ़ना बन्द करो। मास्टर साहब को घर जाने की देर हो रही होगी।

"अच्छा नाराज़ न होइये। क्षमा कर दिया।" कह कर रतनमाला ने मुस्करा दिया।

देवधारी उसको धन्यवाद देते हुए उठ खड़े हुए। रास्ते में उन्होंने सोचा—मैंने वास्तव में बड़ी गलती की है। किसी की लड़की की ओर देखने का मुझे क्या अधिकार है। मैं बड़ा नीच हूं! हे ईश्वर क्या करूँ।

यह सम्भव नहीं है कि आदमी आग के पास बैठे और उसे आंच न लगे। रतनमाला के पास बैठ कर देवधारी पवित्र नहीं रह सकते। तब क्या करना होगा? कुछ दिन अयोध्या में जाकर रहना होगा। चिर-विरह प्रेमाग्नि को बुझा देता है। उसी का अवलम्बन करना होगा। बिना इसके कुशल नहीं है। धर्म की मर्यादा तोड़ने के लिये प्रयाग में रहना पाप है।

उसी दिन शाम को देवधारी ने दो महीने की छुट्टी के लिये दरख्वास्त लिखी। और माता पिता से अयोध्या जाने की अनुमति लेकर प्रधान अध्यापक के घर पर गये। उन्हें अर्जी देदी। देवधारी ने कभी छुट्टी नहीं ली थी। अतएव उन्हें छुट्टी मिल गई। उसी रात को वे अयोध्या जाने वाली गाड़ी पर सवार हो गये।

जब गाड़ी भक-भक कर के चलने लगी तो उनके हृत्तंत्री के तारों पर रतनमाला के निम्न वाक्य बजने लगे।

"नाराज न होइये, क्षमा कर दिया?"

नवाँ परिच्छेद

———:*:———

"कुछ पता लगा ?"—उदास मन होकर गङ्गा ने चन्द्रशेखर से पूछा।

"अयोध्या चले गये हैं"—चन्द्रशेखर ने जवाब दिया।

थोड़ी देर चुप रहने के बाद गङ्गा ने फिर कहा—क्यों? एका एक अयोध्या चले जाने का कारण क्या हुआ?

चन्द्रशेखर—उनके पिता (बैजनाथ) कहते थे कि रामधारी का विवाह जबसे हुआ है तभी से वह न मालूम क्यों बहुत उदास रहा करते थे।

गंगा—उदास क्यों न रहेगा। वह बड़ा भाई है। पहिले ही ब्याह होना चाहिये था।

चन्द्रशेखर—मेरी समझ में यह बात नहीं आती। जब रामधारी का ब्याह हो रहा था तब तो वे बड़े खुश थे। यदि यह बात होती तो वे तभी जा सकते थे।

गङ्गा—तब घर में कोई लड़ाई हुई होगी—सुनती हूँ उनकी माता का स्वभाव अच्छा नहीं है।

चन्द्रशेखर—अभी मैं कुछ नहीं कह सकता। कल ही एक चिट्ठी लिख दी थी, देखो क्या क्या उत्तर आता है।

गङ्गा—तुमने बैजनाथ से उनके ब्याह के विषय में कोई चर्चाच लाई थी?

चन्द्रशेखर—हाँ।

गंगा—क्या ?

चन्द्रशेखर—यही कि मेरे एक लड़की है उसे देवधारी ने देखा है और जहाँ तक मैं समझता हूं वे उसे स्वीकार करने से इन्कार भी न करेंगे।

गंगा—तो ?

चन्द्रशेखर—तो उन्होंने कहा कि आप सज्जन आदमी हैं। लड़की आप की अच्छी ही होगी। यदि ईश्वर को यह सम्बन्ध मंजूर होगा तो अवश्य हो जायगा।

गंगा—फिर तुमने क्या कहा ?

चन्द्रशेखर—मैंने कहा कि लड़की बड़ी सुशील है। घर के कामों में निपुण है सीना पिरोना इत्यादि भी जानती है। किसी रोज चलने की कृपा करें तो दिखला सकता हूं।

गंगा—यह नहीं कहा कि लड़की अपने बाप के बराबर ही पढ़ी लिखी है।

चन्द्रशेखर—वे पुराने ख्याल के आदमी हैं, उनके लिये जैसी पढ़ी लड़की वैसी ही बे पढ़ी, इसीलिये उनसे पढ़ाई लिखाई के बारे में कुछ नहीं कहा।

गंगा—फिर ?

चन्द्रशेखर—फिर दहेज की चर्चा चली।

गंगा—कितना देना होगा ?

चन्द्रशेखर—दो हजार।

गंगा—पढ़ी लड़की का भी दो हज़ार और बगैर पढ़ी लड़की का भी दो हजार।

चन्द्रशेखर—मैं ने तो पहले ही कह दिया कि वहाँ सबै धान बाइस पंसेरी है।

गंगा—तब तो सम्भव है रतनमाला की वहाँ कोई कदर न हो।

चन्द्रशेखर—देवधारी तो कदर करेंगे।

गंगा—जरूर।

चन्द्रशेखर—और किसी से हमको क्या करना है।

गंगा—सास ससुर क्या कोई चीज ही नहीं हैं?

चन्द्रशेखर—हैं क्यों नहीं? फिर क्या किया जाय?

गंगा—क्या कर सकते हो। बड़े सौभाग्य से घर और बर दोनों सुन्दर मिलते हैं।

चन्द्रशेखर—मालूम होता है हमारी जाति में पढ़े लिखे लोग हई नहीं हैं। तुमको पढ़ाकर तुम्हारे बाप ने जिन अड़चनों का अनुभव किया था वही आज मेरे सामने हैं। पर तुम्हारे पिता बुद्धिमान और दूरदर्शी थे। उन्होंने मुझे पढ़ाना आरम्भ कर दिया। और उनकी यह इच्छा कि पढ़ी लिखी लड़की का ब्याह पढ़े ही लिखे आदमी के साथ होना चाहिए पूरी हो गई।

गंगा—पढ़े ही लिखे लड़के के साथ तो तुम भी बेटी का ब्याह कर रहे हो।

चन्द्रशेखर—जैसा चाहिये वैसा पढ़ा नहीं है।

गंगा—सदाचारी और सुशील तो है।

चन्द्रशेखर—वैसे तो जहाँ कोई नहीं है, वहाँ इसे सर्व-श्रेष्ठ कह सकते हैं।

गंगा और न मालूम क्या कहने वाली थी कि पोस्टमैन ने आकर एक बन्द लिफाफा कमरे में फेक दिया। चन्द्रशेखर बोल पड़े—पता तो उन्हीं के हाथ का लिखा जान पड़ता है।

गंगा ने लिफाफा खोल कर पढ़ना आरम्भ किया—

पिता स्वरूप पूज्य पंडित चन्द्रशेखर जी, प्रणाम !

आदमी जब कोई पाप करता है तो प्रायश्चित्त करने के लिये किसी तीर्थ स्नान में जाता है। मैं भी यहाँ एक प्रकार से प्रायश्चित्त ही करने आया हूं। जब आप को मालूम होगा कि मैं किस दर्जे का अपराधी हूं तो आप मुझसे घृणा करने लगेंगे।

जिस दिन आप से मेरा परिचय हुआ था, तभी से न मालूम क्यों मेरे हृदय में रतनमाला के प्रति अनुचित स्नेह उत्पन्न हो गया था। फिर जब मैं उसे पढ़ाने लगा तो यह स्नेह यहाँ तक बढ़ गया कि मैं विवश हो गया। लाख उपाय करने पर भी मैं इसको न दबा सका। अन्त में रतनमाला पर भी इसका भेद प्रगट होगया। रतनमाला ने देखा कि मैं उसकी ओर निरन्तर देखा करता हूं। पहले तो वह चुप रही। पर कोई कहाँ तक अनुचित ज्यादती सह सकता है ? उसने अन्त में कह दिया—आप मेरी ओर क्यों ताका करते हैं ?

मैं ने अपना अपराध उसी समय स्वीकार कर लिया और रतनमाला से क्षमा प्रार्थना की। उस देवी ने क्षमा कर दिया। परन्तु यह सोच कर कि प्रयाग रह कर रतनमाला को पढ़ाते रहने से मैं अपनी स्वाभाविक कमजोरी के कारण यही अपराध फिर कर बैठूँगा। यहाँ चला आया हूं। अब यहाँ मैं इस बात का यत्न कर रहा हूं कि मैं रतनमाला को भूल जाऊँ। आपको मैंने जब अपना पिता मान रक्खा है तो आप से इस बात का छिपाना भी एक प्रकार का पाप ही है। इसी लिये आप से भी यह पत्र लिख कर क्षमा प्रार्थी हूं। आशा है आप मुझे अवश्य क्षमा कर देंगे। माता गंगा से भी मेरी ओर से बिनती करके मेरे ऊपर दया करने की बात कहियेगा।

चित्त की वृत्तियाँ शान्त होने पर प्रयाग फिर आऊँगा।

आपका, अपराधी देवधारी।

गंगा ने पत्र पढ़ने के बाद कहा--देखो कैसा स्वच्छ हृदयोद्‌गार है। मेरी समझ में तो देवधारी जैसा सदाचारी युवक मिलना कठिन है।

रतनमाला उस समय शिव जी के मन्दिर में थी। माता ने उसे बुला कर पूछा—बेटी देवधारी से और तुमसे कुछ बातें हुई थीं क्या?

रतनमाला ने सिर नीचा कर के कहा—कैसी बातें?

गंगा--तू ने उससे कुछ कहा था?

रतनमाल—मैंने तो कुछ नहीं कहा।

गंगा—तू ने यह नहीं कहा था कि मेरी ओर क्यों देखते हो?

रतनमाला—शायद कहा था। तुम्हें कैसे मालूम?

गङ्गा मुझ से तू कुछ नहीं छिपा सकती। मैं तेरी सब बातें जानती हूं। इसके अलावा भी और भी बहुत सी।

यद्यपि माता ने ये शब्द इस लिये कहे थे कि रतनमाला देवधारी के सम्बन्ध में कुछ और कहे। पर रतनमाला यह सोच कर भयभीत होने लगी कि शायद नूरमुहम्मद की चिट्ठियों का भी उसे ज्ञान होगया है।

रतनमाला को घबड़ाई देख कर गगां ने यह समझा कि अवश्य उसमें और देवधारी में कुछ ऐसी बातें हुई हैं जिन्हें वह छिपाना चाहती है। गङ्गा यह सोच कर बड़ी प्रसन्न हुई। वह तो यह चाहती ही थी कि दोनों में प्रेम हो जाय। उसने मुस्करा कर कहा—जब देवधारी तेरी ओर ताक रहा था तो तू ने उसे मना नहीं किया?

रतनमाला—मना कैसे करती ?

गङ्गा—उसका ताकना अच्छा मालूम हो रहा था क्या ?

रतनमाला ने अपना सिर नीचा कर लिया। मारे लज्जा के उसके गाल लाल हो गये।

गङ्गा ने कहा—यदि तेरा देवधारी के साथ ब्याह कर दिया जाय तो कैसा हो ?

यह सुनते ही रतनमाला मुँह छिपा कर शिवाले की तरफ भाग गई। वह इतनी लजा गई थी कि माता के पास ठहर न सकी।

शिवाले के अन्दर पहुँचते ही रतनमाला ने भीतर से किवाड़ बन्द कर लिये। लज्जा ने इस प्रकार उसका पीछा कभी न किया था। उसे स्वप्न में भी यह ध्यान न था कि वह माता के मुख से स्वयं अपने विवाह के विषय में कुछ सुनेगी।

जो लड़की इतनी लजीली है कि अपने विवाह की चर्चा सुनते ही सिकुड़ कर गठरी हो जाती है वह अपना विवाह स्वयं करने का साहस कैसे कर सकती है ? माता पिता की इच्छा के सामने उसको सिर झुकाना ही पड़ेगा। कदाचित यही कारण है कि कितनी ही जवान-जवान लड़कियाँ बूढ़ों के हाथ बेच दी जाती हैं और चूँ तक नहीं करतीं। जब तक लड़कियाँ इतनी लज्जाशील रहेंगी तब तक उनको मन के माफिक बर नहीं मिलेगा। लोग कहते हैं पढ़ी लिखी लड़कियाँ इतनी बुरी तरह नहीं लजातीं। रतनमाला तो काफी पढ़ी है। फिर वह क्यों गँवार स्त्रियों की भाँति छिपती फिरती है।

रतनमाला ने बैठे बैठे सोचा—देवधारी दया का पात्र अवश्य है, सीधा है, उदार है, सदाचारी है। पर ऐसे तो संसार में

सैकड़ों आदमी होंगे। किसके किसके ऊपर दया दिखाई जाय? विवाह के मामले में दया भाव को दूर रख देना होगा। जीवन मरण का मामला है। यह वह बन्धन है जो कभी खुल नहीं सकता। ऐसे बन्धन में हाथ देने से पहले आगा पीछा खूब सोच लेना चाहिये नहीं तो पीछे पछताना पड़ेगा। सोने का भविष्य मिट्टी में न मिलने देने के लिये यह आवश्यक है कि वह लज्जा छोड़कर माता से साफ साफ कह दे कि उसे देवधारी पसन्द नहीं है। उसे अंग्रेजी पढ़ा हुआ नूरमुहम्मद की तरह कोई नई रोशनी का फैशनेबुल युवक चाहिये।

उसने शिवाले का दर्वाजा खोला और साहस करके उस कमरे की ओर बढ़ी जहाँ माता बैठी थी। उसका दिल धड़क रहा था, मालूम होता था वह साहस करके कह देगी कि देवधारी को इस हृदय में स्थान नहीं मिल सकता। बड़ी मुश्किल से अपने को खींच कर वह कमरे के द्वार तक ले गई। किन्तु माता ने उसको देखकर ज्यों ही मुस्कराया त्यों ही उसकी वही दशा हो गई जो शिवाले में जाने से पहले हुई थी। इस बार वह पीछे की ओर न लौट सकी। सामने ही छत पर जाने के लिये सीढ़ी लगी थी उसी पर उसके पाँव आपसे आप पड़ कर उसे ऊपर उठा ले गये।

दसवां परिच्छेद

बैसाख का मध्याह्न था। सूर्य सिर पर चमक रहा था। मालूम होता था अनन्त आकाश अपनी एक आँख से सम्पूर्ण वसुधा को तपा कर अपने ही रंग का कर देने के लिये उद्यत है। बसन्त की विदाई थी फिर भी नीम के फूलों पर पत्तियों की आड़ में छिप छिप कर मधुमक्खियाँ भनभना रहीं थी। मानों उन्हें इसका ध्यान ही न था। पीपल की नई पत्तियाँ ज्वर से पीड़ित कुम्हलाई हुई बालिका की भाँति अपने वायु-पालने पर बेचैन पड़ी थी। थोड़ी दूर पर एक इमली की घनी छाया में एक दही बेचने वाला देहाती बैठ कर पैसे गिन रहा था। उसी के पास दो तीन कुत्ते अपनी जीभ निकाले हाँफ रहे थे। लोग कहते हैं ऐसे समय में वही घर से बाहर निकलता है जिसके पैर में शनीचर देव फूँक मार देते हैं। जो हो चन्द्रशेखर के नाले की तरफ वाले दरवाजे पर दो स्त्रियाँ आकर खड़ी हुई। दरवाजा भीतर से बन्द था। अतएव उनमें से एक ने पुकारा—बेटी रतनमाला !

पाठक इस स्त्री को आवाज ही से पहचान सकते हैं। यह नूरमुहम्मद की दादी है। दूसरी स्त्री कुछ स्थूल शरीर और युवा मालूम होती है। उसने अपने को सिर से पैर तक एक भारी बुरके से मूँद रक्खा है अतएव उसके विषय में तभी कुछ जानकारी हो सकती है जब वह घर के अन्दर पहुँच कर अपना बुरका उतारे।

देहाती लोगों का यह स्वभाव होता है कि वे अकेली दुकेली स्त्री देख कर कुछ गुनगुनाते लगते हैं। बुरका में बन्द युवती को देखकर इमली के पेड़ के नीचे बैठे दही बेचने वाले ने जोर जोर से कुछ अलापना शुरू किया। उसके गाने के साथ ही कुत्ते भी भूँकने लगे। दादी ने कहा—अल्लाह खैर करे।

बुरके में बन्द युवती ने कहा—कल इन सब की खबर ली जायगी।

वह युवती अपना वाक्य समाप्त न कर पाई थी कि रतन-माला ने आकर दर्वाजा खोल दिया। दोनों स्त्रियाँ भीतर घुस गईं रतनमाला ने बन्द करते हुए पूछा—यही तुम्हारी पतोहू हैं।

दादी ने मुस्करा कर कहा—हाँ।

इसके कुछ दिन पहले दादी ने रतनमाला से कहा था कि उसकी एक नाते की पतोहू रतनमाला को देखना चाहती है और अपने पति को एक चिट्ठी लिखवाना चाहती है। पर वह उसी समय आएगी जब रतनमाला के माता पिता घर में न हों। आज इसीलिये रतनमाला तबीयत खराब होने का बहाना कर के घर रह गई थी। गङ्गा उसे स्कूल जरूर ले जाती पर उसका इम्तिहान हो चुका था। स्कूल में जाकर वह बैठी ही रहती थी। इस लिये उसने रतनमाला के घर रह जाने में कोई आपत्ति न की।

रतनमाला को यह न मालूम था कि दादी की पतोहू उसका पूत निकल जायगा जैसा कि उसने बुरका हटाते ही सिद्ध कर दिया। दर्वाजा खोलते समय उसने जो काना फूसी सुनी थी उसी से उसे कुछ शुबहा होगया था। फिर भी उसने बड़ी असावधानी

से काम किया। मारे भय के वह सिकुड़ कर एक कोने में खड़ी हो गई।

नूरहमुम्मद ने कहा—रतनमाला, डरो मत! मैं तुम्हारे साथ किसी प्रकार की जबरदस्ती नहीं करूँगा।

रतनमाला ने थर-थर काँपते हुए कहा—इसका मुझको विश्वास है।

नूरमुहम्मद—तुम मेरे बाग में क्यों नहीं आती थीं?

रतनमाला—अम्मा मने कर देती थीं नहीं तो जरूर आती।

नूरमुम्मद—सुना है तुम्हारा व्याह होने वाला है।

इस बार रतनमाला कुछ नहीं बोली।

नूरमुहम्मद—कहो कहो, शर्माती क्यों हो?

रतनमाला—मुझे मालूम नहीं है।

नूरमुहम्मद—गलत।

रतनमाला—गलत ही सही।

नूरमुहम्मद—गलत ही गलत में एक रोज यह सही हो जायगा और तुम दूसरे की हो जाओगी।

रतनमाला—यदि ईश्वर को यही मंजूर होगा तो मनुष्य का क्या वश है।

नूरमुहम्मद—मनुष्य का वश क्यों नहीं है। यदि मैं तुम्हें इसी समय जबरदस्ती अपने घर ले चलूँ, तो ईश्वर क्या करेगा?

रतनमाला काँप उठी। उसे मालूम हुआ मानों नूरमुहम्मद उसे पकड़ने ही आया है। अभी देखते ही देखते वह एक मुसलमान के पंजे में फँस जायगी और अपने प्यारे माता पिता को सदैव के लिए रोता और तड़पता छोड़ जायगी। उसने सोचा—वाद विवाद से इसके पंजे से छूटना मुश्किल

है, विनय से सम्भव है धर्म की रक्षा हो जाय। अतएव उसने कहा—ईश्वर क्या करेगा, कुछ नहीं।

नूरमुहम्मद—और तुम क्या करोगी?

रतनमाला—मैं भी कुछ नहीं कर सकूँगी। असहाय अबला पुरुष के सामने क्या कर सकती है।

नूरमुहम्मद—तुम जानती हो कि मैं तुम्हें कितना प्यार करता हूँ।

रतनमाला—जानती हूँ, तुम मुझे जी जान से प्यार करते हो।

नूरमुहम्मद—और तुम मुझे जरा भी नहीं प्यार करती हो।

रतनमाला—कलेजा फाड़ सकती तो दिखला देती! मेरे हृदय में तुम्हीं तुम हो। एक सबूत अभी दे सकती हूँ! तुम्हारी चिट्ठियाँ मैं प्रेम से रोज पढ़ती हूँ और सब को बड़ी हिफ़ाज़त से रक्खे हुए हूँ। अभी दिखलाए देती हूँ, ठहरो।

यह कहते हुए वह अपने पढ़ने के कमरे में घुसी। वहाँ उसे रक्षा का एक उपाय सूझ गया। उसने फौरन भीतर से किवाड़ बन्द कर लिए।

नूरमुहम्मद यह देखते ही अवाक रहा गया और आगे बढ़ कर बोला—यही मुझे प्यार करती हो इस प्रकार क्या किसी को धोका देना चाहिये।

रतनमाला—और तुम क्या धोका नहीं देते हो। भेष बदल कर कोई भला आदमी किसी अकेली स्त्री को छलता है?

नूरमुहम्मद—भेष बदल कर न आता तो तुम्हारा दर्शन कैसे पाता?

रतनमाला—मैं भी किवाड़ बन्द न करती तो मेरा धर्म खतरे में रहता।

नूरमुहम्मद—मैं ने तो पहले ही कह दिया था कि मैं तुम्हारे साथ किसी प्रकार की ज़बरदस्ती नहीं करूँगा।

रतनमाला—तुम तो मेरे साथ कोई ज़बरदस्ती न करोगे मगर तुम्हारे दिल में जो वासना है जब वह ज़ोर पकड़ जायगी तो उसका जिम्मेदार कौन होगा।

नूरमुहम्मद—मैं खुदा की कसम खाकर उसका जिम्मा लेता हूँ।

रतनमाला—उसका जिम्मा लेते हो तो अपने घर वापस चले जाओ।

नूरमुहम्मद—अपने घर आये हुए को कोई इस प्रकार दुतकारता है।

रतनमाला—मैं दुतकारती नहीं हूं आपके समझने में फेर है।

नूरमुहम्मद—अच्छा बाहर निकलो एक बार तुम्हें देख लूँ।

रतनमाला—यदि केवल देखने ही का शौक है तो किवाड़े की साँस से देख सकते हैं।

नूरमुहम्मद ने किवाड़ में अपना सिर अड़ा दिया और बोला—कोई सलाई है।

रतनमाला—क्यों।

नूरमुहम्मद—मेरी आँखे इसी किवाड़े की साँस में सलाई छोड़ कर फोड़ दो।

रतनमाला—आप की इस आज्ञा का पालन कर सकती हूं। सन्दूक खोल कर उसने एक सलाई निकाली। और उसे सांस में छोड़ने लगी। नूरमुहम्मद ने अपना सिर हटा लिया।

रतनमाला—क्यों ? आँख नहीं फोड़वाइयेगा क्या ?

नूरमुहम्मद ने कुछ लज्जित होकर कहा—आँख फोड़वालूँगा तो तुम्हें फिर कैसे देखूँगा ?

रतनमाला ने सलाई रख दी। नूरमुहम्मद ने किवाड़े की साँस से फिर देखना शुरु किया। रतनमामाला ने सन्दूक से उसकी चिट्ठियाँ निकाल कर कहा—देखिये ! ये रही आप की चिट्ठियाँ।

नूरमुहम्मद ने कहा—और मेरी प्यारी कहाँ रही ?

रतनमाला—धर्म के जेलखाने में।

नूरमुहम्मद—कितने दिनों की सज़ा मिली है ?

रतनमाला—जन्म भर के लिये।

नूरमुहम्मद—जरा किवाड़ खोल दो। बस मैं तुम्हें धर्म के जेलखाने से निकाल लूँगा।

रतनमाला—कैदी में इतनी सामर्थ्य कहाँ है कि वह जेलखाने से बाहर खड़े हुए किसी अपने जन की आज्ञाओं का पालन कर सके ?

नूरमुहम्मद—तो जाऊँ ?

रतनमाला—इस वक्त और क्या कह सकती हूं।

नूरमुहम्मद—अच्छा आज फैसला कर दो तुम मेरी बीबी बन सकती हो या नहीं ?

रतनमाला—इस प्रश्न का उत्तर मेरे माँ बाप दे सकते हैं।

नूरमुहम्मद—और तुम नहीं ?

रतनमाला—नहीं, मैं अपना विवाह स्वयं करने के लिये स्वतंत्र कहाँ हूं ?

नूरमुहम्मद – साफ साफ इन्कार क्यों नहीं कर देती हो ?

रतनमाला इस बार चुप हो रही।

नूरमुहम्मद – अच्छा आज से तुम्हारे पास कभी न आऊँगा मुझे पहले यह न मालूम था कि तुम केवल मर्ज हो दवा नहीं हो।

रतनमाला ने इस बार भी कोई उत्तर नहीं दिया।

नूरमुहम्मद ने किवाड़े की साँस से चमचमाती हुई सोने की दस गिन्नियाँ डाल दी और कहा – लो आज ही तुम्हें बिदाई दिये जाता हूं। अल्लाह तुम को खुशी रक्खे।

हताश होकर नूरमुहम्मद जैसे आया था वैसेही अपनी दादी के साथ चला गया। इमली के नीचे बैठा हुआ दही वाला फिर गाने लगा। इस बार नूरमुहम्मद फौरन अपने बाग में जाकर जनाने कपड़े उतार अपने असली वेष में आकर बोला – मेरे घर की औरतें पंडित जी के यहाँ आई थीं। तू रास्ते में उनसे छेड़ छाड़ कर रहा था।

दही वाला क्रोध से भरे नूरमुहम्मद को शीघ्र कोई उत्तर दे सका। उसे नूरमुहम्मद लात और जूतों से पीटने लगा और पीटते पीटते बेदम कर दिया। जब नूरमुहम्मद ने पीटना बन्द किया तो बेचारा मर चुका था। कहाँ का गुस्सा कहाँ उतरा।

नूरमुहम्मद के चले जाने पर भी रतनमाला उसी कमरे में बन्द बैठी रही। उसे डर लगा हुआ था कि कहीं वह चुप होकर छिप न रहा हो। कमरे में पिता का कोट टँगा हुआ था। अचानक उसकी जेब में उसने हाथ छोड़ दिया। एक लिफाफा पड़ा था। उसे खोलकर वह पढ़ने लगी।

पिता स्वरूप पंडित चन्द्रशेखर जी,

कृपा पत्र मिला। मैं यह सोच रहा था कि रतनमाला को

अनुचित रीति से प्यार करके मैं बड़ा पाप कर रहा हूँ। मैं ने अपने पहले पत्र में इसी के लिये क्षमा प्रार्थना की थी। पर अब देखता हूँ कि पाप कर्म का मुझे बड़ा सुन्दर पुरस्कार मिलने वाला है। मैं बहुत कम पढ़ा हूँ। रतनमाला जैसी योग्य और पढ़ी लिखी कन्या के लायक नहीं हूँ। यही सोच कर अब दुःखी हो रहा हूँ। मुझमें ऐसे गुण कहाँ हैं कि पति के रूप में रतनमाला के सम्मुख खड़ा होऊँ। हाँ, सेवक बन कर सामने होने की हिम्मत कर सकता हूँ। यदि रतनमाला मुझे स्वीकार कर लेगी तो निश्चय मैं अपने को धन्य मानूँगा। एक चिट्ठी पिता जी की भी मिली है। उन्होंने भी शीघ्र वापस आने को लिखा है और लिखा है कि विवाह पक्का हो चुका है। अब आने में कोई देर नहीं है। माता गङ्गा से चरण छू कर प्रणाम कहना।

आपका—देवधारी।

पत्र पढ़ने के बाद रतनमाला ने मन ही मन कहा—धन्य है इस हृदय को। इसमें और नूरमुहम्मद में कितना अन्तर है? यह बुरी निगाह से भी पराई स्त्री को देखने का प्रायश्चित करता है और वह सब प्रकार से उसकी इज्जत लेने को तैयार है। यह देवता है, वह राक्षस है। यह वास्तव में निरपराध है, वह पूरा अपराधी है।

इसके थोड़ी ही देर बाद उसने फिर सोचा—देवधारी ने ही तो उस दिन कहा था कि संसार में ऐसा कोई अपराध नहीं जो क्षमा न किया जा सके। फिर वह अपराधी भी तो नहीं कहा जा सकता। उसने मेरे साथ कोई ज्यादती नहीं की। मैं स्वयं ही मारे डर के कमरे में बन्द हो गई। न बन्द होती तो भी वह चुपचाप चला जाता। मुझे प्यार करता है, इसीलिये

देखने आया था। मेरा अनिष्ट वह नहीं सोच सकता। सोचता तो कमरे में गिन्नियाँ क्यों गिराता ?

धीरे धीरे मन ही मन वाद-विवाद करके उसने सिद्ध कर लिया कि नूरमुहम्मद बिल्कुल निर्दोष है। उस समय तक यदि नूरमुहम्मद रुक गया होता और दरवाज़ा खोलने की फिर प्रार्थना करता तो शायद रतनमाला उसके चङ्गुल में फँस जाती।

ग्यारहवां परिच्छेद

---:*:---

आज रतनमाला की बिदाई का दिन है। बाहर बैठे हुए बैजनाथ मिश्र जल्दी मचा रहे हैं और भीतर मानो किसी के कान ही नहीं हैं। गङ्गा के चेहरे पर अभी क्षण भर पहले विवाह के धूम धाम की जितनी खुशी थी वह सब रोदन में परिणत हो गई। उसने बालकों की भाँति रोना आरम्भ कर दिया—उसकी रतनमाला आज से दूसरे की होगई! अब चूल्हे में आग जलाने के लिये उसे स्वयं उठना पड़ेगा! अब दुनिया में ऐसा कोई नहीं है जो बिना किसी मेहनताना या प्रशंसा के उसकी फटी धोती चुप चाप सी कर रख देगा? शाम के समय चिराग जलाने के लिये अब वह किसको आज्ञा देगी। शिव जी के मन्दिर की सफाई कौन करेगा? प्रातःकाल चन्द्रशेखर के लिये दातौन कौन लायेगा। उसके घर में जो दीप शिखा थी वह अन्यत्र चली जायगी और उसके घर में अन्धकार छा जायगा। जिन स्त्रियों ने गङ्गा के चुप कराने का बीड़ा उठाया था वे उसके पास पहुँचते ही स्वयं रोने लगीं।

रतनमाला अपने कमरे में बैठी हुई थी। सामने वही सन्दूक पड़ा था जिसमें उसने नूरमुहम्मद की चिट्ठियां रक्खीं थी। उसने सन्दूक खोला। चिट्ठियों को एक एक कर के देखा। इधर उधर पढ़ा और फाड़ दिया। अब इन चिट्ठियों को रख कर वह क्या करेगी? इच्छा से हो या अनिच्छा से हो अब वह दूसरे की होगई, स्वतंत्र नहीं है। अब उसे नूरमुहम्मद को भूल जाना होगा। वह हिन्दू की लड़की है। और फिर अब

उसका विवाह हो चुका है। सन्दूक के एक कोने में नूरमुहम्मद की गिन्नियाँ रक्खी हुई थीं। उसने सोचा—इन गिन्नियों को लेना ठीक नहीं है। बहिन अपने भाई की दी हुई प्रत्येक चीज को बड़ी खुशी से ले सकती है। पर नूरमुहम्मद क्या उससे भाई बहिन का रिश्ता जोड़ने को तैयार है? कदापि नहीं! इन गिन्नियों को वह माता को दिये जायगी। वे नूरमुहम्मद के पास पहुँचवा देंगी। फिर उसने सोचा—नहीं इससे उसका दिल दुखी होगा अभी इन गिन्नियों को उसके पास भिजवाना ठीक नहीं है। जब ये सब बातें पुरानी पड़ जायँगी तो देखा जायगा।

चन्द्रशेखर आँखों में जल भरे हुए बैजनाथ के पास बैठे हुये थे। बैजनाथ ने कहा—भाई अब तो बहुत देर हो रही है।

चन्द्रशेखर—बिदा बिदाई में ऐसा होता ही है।

बैजनाथ—ऐसा ही है तो कहो आज रह जायँ खाना होने का समय तो निकला जाता है।

यह सुन कर चन्द्रशेखर के दिल में एक प्रकार की चोट सी लगी। पर वह आँखों के जल में छिप गई। उन्होंने कहा—जब अभी तक आपको रुष्ट नहीं होने दिया तो अब दस बीस मिनट के लिये आप का अपराधी नहीं बनूँगा। अभी सब प्रबन्ध करता हूं। धैर्य धरें!

यह कहते कहते चन्द्रशेखर का गला भर आया। वे अन्दर सीधे रतनमाला के कमरे में चले गये और बोले—बेटी अब तुम पर मेरा कोई अधिकार नहीं रहा। अब तुम जिसकी होगई हो उसके पिता तुम्हें यहाँ एक मिनट भी अधिक नहीं रहने देना चाहते। चलो, बाहर पालकी रक्खी है, उस पर बैठ जाओ। तुम्हारी माता के भीरु दिल में इतना बल कहाँ है कि वह तुम्हें घसीट कर डोली में बैठाल आएगी, यह काम तुम स्वयं कर डालो।

रतनमाला पिता के पैरों से लिपट गई। उनके हाथों में इतना भी जोर न रह गया कि वे उसे छुड़ा कर फिर पूर्ववत् बैठाल दें। उसी समय गङ्गा ने भीतर आकर रोते हुए कहा—बहुत दूर नहीं भेज रही हूं। दो घंटे के रास्ते पर ही तो जारही है। फिर मैं शीघ्र ही वापस बुला लूँगी। तेरे पिता तेरे साथ ही जा रहे हैं? और किसे भेजूँ? जहाँ तक होगा वे तुझे अपने साथ ही वापस लेते आयेंगे।

"मैं नहीं जाऊँगी अम्मा! मैं नहीं जाऊँगी! तुम्हारी रोटी कौन बनाएगा? घर में और कौन है? उनसे कहला दो बेटी नहीं जाना चाहती।"

चन्द्रशेखर—यह क्या कहती हो, अपना दिल कड़ा करो। अब बिल्कुल समय नहीं है।

रतनमाला—पिता जी! मुझ पर दया न करोगे, घर से निकाल ही कर छोड़ोगे?

चन्द्रशेखर रो पड़े। उनकी समझ में न आया कि क्या उत्तर दें।

इधर यह हाल था उधर बैजनाथ मिश्र चिल्लाने लगे—नहीं बिदा करते तो न करें। ऐसी ही लाड़िली बेटी थी तो विवाह ही क्यों किया?

"निर्दयी बैजनाथ! तुम बेटी की विदाई की पीड़ा क्या समझो ईश्वर ने तुम्हें बेटी नहीं दी, इसीलिये जो चाहो सो कह लो," कहती हुई कन्यापाठशाला की दो तीन अध्यापिकाएँ रतनमाला के कमरे में जा पहुँची। उन्हें मालूम था कि यह काम गङ्गा या चन्द्रशेखर का नहीं है। माता पिता के हृदय में लड़की को पालकी पर घसीट कर बैठाने का बल नहीं रहता और रतनमाला अपने आप नहीं जा सकती। अध्यापिकाओं ने बल पूर्वक रतनमाला

को पालकी में बैठाल कर चुप कर दिया। रतनमाला पालकी के भीतर सिसकने लगी। चन्द्रशेखर का मकान सूना हो गया। ईश्वर ने उन्हें जो रत्न दिया था उस पर दूसरे का अधिकार हो गया। गंगा का और उनका जो प्रेम शरीर धारण करके घर में हँसा करता था वह आज रोता हुआ उनसे अलग हो रहा है। चन्द्रशेखर ने मन ही मन कहा--किस में सामर्थ्य है कि वह माता पिता को समाज की इस यन्त्रणा से बचावे।

कहारों की आदत होती है कि जैसे ही रोती हुई लड़की पालकी पर बैठाई जाती है वैसे ही वे उसे लेकर चल पड़ते हैं। रतनमाला भी कहारों की इसी आदत के कारण अपने घर को अन्तिम बार न देखने पाई अब उसके पास सिवाय मन ही मन प्रणाम करने के और कोई उपाय शेष न था।

जब पालकी माधी पहुँचकर बैजनाथ मिश्र के द्वार पर खड़ी हुई और स्वागत के लिये उपस्थित ग्राम स्त्रियों के मंगल गान सुनाई पड़े, तब उसके आँसू सूख चुके थे। जिस देवधारी को वह बहस में हरा कर अपराधी ठहरा देती थी अब केवल उसी का सहारा था। परिस्थिति में इस परिवर्तन से वह एक प्रकार से दुखी भी हो रही थी। पर यह परिवर्तन तो वह जहाँ भी जाती वहीं उपस्थित होता।

जब रतनमाला पालकी से उतार कर एक एकान्त कमरे में ले जाई गई तो उसने अपने मुँह से आगे की लटकती हुई चद्दर को हटा दिया। उसकी इस कृति पर कतिपय बूढ़ी स्त्रियाँ बिगड़ खड़ी हुईं। एक ने कहा--वाह! आते देर नहीं लगी कि मुँह खोल कर बैठ गई?

एक दूसरी ने कहा--नई दुलहिन को मुँह खोल कर नहीं बैठना चाहिये। सुनाई तो पड़ता था कि बहुत पढ़ी लिखी हो

जब लाज ही लिहाज नहीं तो कहाँ का पढ़ना कहाँ का लिखना ?

एक तीसरी ने कहा--बीबी हैं बीबी ! बीबियाँ परदा नहीं करतीं। देवधारी की माँ अर्थात राजरानी ने कहा--मैं तो पहले ही कहती थी कि शहर में ब्याह करना ठीक नहीं। शहर की लड़कियाँ बदमाश भी होती हैं और बदचलन भी।

अभी तक रतनमाला चुपचाप बैठी सब की बातें सुन रही थी। वह मन ही मन बड़ी क्रोधित हो रही थी। ऐसी कड़ी बातें किसी के मुख से उसने नहीं सुनी थीं और न वह बात चीत करने में किसी से डरती थी। स्कूल का मुआइना करने जब अंग्रेज लेडियाँ आती थीं तो वह उनसे बराबर बेधड़क बोलती थी। गाँव की इन गँवार औरतों के सामने वह बहुत देर तक चुप न रह सकी। सास के शब्द कि शहर की लड़कियाँ बद-माश भी होती हैं और बद चलन भी उसके हृदय में बरछी की तरह गड़ रहे थे। उसने कहा--जब आप का यह विश्वास है कि शहर की सभी लड़कियाँ बदमाश भी होती हैं और बदचलन भी तो मुझे शौक से अभी अपने घर से निकाल दीजिये। अभी कुछ बिगड़ा नहीं है।

राजरानी घर में रानी बन कर हुकूमत कर रही थी। उसकी छोटी पतोहू दुलारी उसके चरणों की दासी थी। उससे अभी तक किसी ने एक भी कड़ा शब्द कहने का साहस न किया था। रतनमाला के उपरोक्त शब्द सुनते ही उसका पारा चढ़ गया। वह लाल लाल आँखें कर के बोली—निकल जलमुँही, निकल जा घर से, तेरी यहाँ ज़रूरत ही क्या है। जा उसी अपने लाड़ले बाप के घर में पतुरिया बन कर बैठ।

गङ्गा ने आँसू बहा-बहा कर रतनमाला की जो बेनी बाँधी थी उसे पकड़ कर राजरानी ने अपने क्रोध का परिचय देना आरम्भ

कर दिया। इतनी औरतों में बेचारी रतनमाला राक्षस स्त्रियों से त्रसित लङ्का में गिरफ़्तार सीता सी चुप हो कर बैठ गई। अपना क्रोध पी गई। और उपाय ही क्या था?

राजरानी ने उसी के अञ्चल से उसका मुँह बाँध कर मूँद दिया और बोली—देखें कैसे मुँह खोल कर बैठती है? मारते मारते कच्चूमर निकाल लूँगी और किसी को मत बनाना।

रतनमाला ने स्वप्न में भी यह न सोचा था कि देवधारी जैसे भोले भाले युवक की माता इतनी कठोर हृदया और शैतान होगी। यह जानती होती तो वह कदापि इस विवाह सम्बन्ध को स्वीकार न करती। माता पिता से निर्लज्ज होकर कह देती कि योग्य वर नहीं मिलता तो वह कुमारी ही रहेगी। ससुराल में क्या कोई स्त्री लात और घूँसे खाने जाती है। उसने मन ही मन कहा—मैं यहाँ नहीं रह सकती। असमर्थ और अपाहिज नहीं हूं जो अत्याचार सहती पड़ी रहूँगी। यदि यहाँ से जीवित भाग सकी तो कहीं नौकरी कर लूँगी। नौकरी न मिलेगी तो नूरमुहम्मद की शरण लूँगी। बेचारा कितना सज्जन है। ऐसे हिन्दुओं से तो वह मुसलमान लाख दर्जे अच्छा है। हजारों स्त्रियाँ जो मुसलमान या ईसाई हो जाती हैं उसका यही कारण है कि हिन्दू के घर के निरन्तर अत्याचार नहीं सह सकतीं। मैं भी किसी न किसी उपाय का अवलम्बन करूँगी। हाय! माता पिता की नासमझी से आज मुझे कितना दुःख उठाना पड़ा है?

गंगा की इच्छानुसार चन्द्रशेखर रतनमाला की पालकी के पीछे ही पीछे आये थे। दूसरे रोज जब वे जाने लगे तो उन्होंने रतनमाला से मिल लेना उचित समझा। बड़ी कोशिश और प्रार्थना के बाद बैजनाथ मिश्र ने ऐसा प्रबन्ध किया।

चन्द्रशेखर सोच रहे थे कि रतनमाला उनको देखते ही रोने लगेगी। पर उसकी आँखों में आँसू न थे। पश्चात्ताप की ज्वाला में वे स्वाहा हो गये थे। चन्द्रशेखर यह देखकर कुछ डरते डरते बोले—अब मैं जा रहा हूं।

रतनमाला कुछ उदास मुख से बोली—हाँ, अब आप अपने कर्त्तव्य से बरी हो गये। यह कहने के साथ ही रतनमाला ने सोचा कि उसने पिता के प्रति कठोर शब्दों का ब्योहार किया है अतएव वह फिर बोली—और मुझको?

चन्द्रशेखर—अब तुम दूसरे की हो।

रतनमाला—मैं किसी की नहीं होना चाहती। मनुष्य मनुष्य का गुलाम होकर रहने के लिये नहीं बना है?

चन्द्रशेखर—मगर तुम तो स्त्री हो।

रतनमाला—स्त्री हूं तो क्या सब की बात सहूँगी?

चन्द्रशेखर—सहना ही पड़ेगा।

रतनमाला—कदापि नहीं सह सकती। तुम अपने साथ न ले चलोगे तो छिपकर कहीं भाग जाऊँगी। यहाँ रहने से मर जाना अच्छा है।

चन्द्रशेखर—एक ही रोज में यह नहीं जाना जा सकता कि कौन सा स्थान कैसा है?

रतनमाला—बटलोही में एक ही चावल टटोला जाता है।

इसके बाद रतनमाला ने पहले दिन की घटना आद्योपान्त कह सुनायी, जिसे सुन कर चन्द्रशेखर अवाक् रह गये। पहले तो उन्होंने गुस्से में आकर सोचा—बेटी को साथ ही लिवा ले जायँ। फिर उन्होंने सोचा—जल्दी में कोई काम करना ठीक नहीं होता। इस मामले में गंगा की भी राय ले लेनी चाहिये। फिर

यह भी सम्भव है कि बैजनाथ बिदा न करें। अतएव वे बोले—अच्छा, मैं शीघ्र ही तुम्हारी माता की सलाह लेकर आऊँगा। तब तुमको लिवा ले चलूँगा। अभी ऐसा करना ठीक न होगा। तब तक तुम जैसा यहाँ की स्त्रियाँ और तुम्हारी सास कहें वैसा ही करो। दो तीन रोज मुँह मूँद कर रहने में कोई बुराई न होगी। जो भूल होनी थी वह तो हो ही गई है। विवाह-विच्छेद तो किया ही नहीं जा सकता। हाँ, परिस्थिति में अवश्य कुछ परिवर्तन करवा दूँगा।

उसी समय राजरानी ने पर्दे की आड़ में से कहा—जनाब आपकी लड़की बड़ी लाड़िली रही होगी। यहाँ उसको वैसा ही रहना होगा जैसा हम लोग कहेंगे। इसे खूब समझा दीजिएगा नहीं पीछे से कुछ बने बिगड़े तो हम नहीं जानते।

चन्द्रशेखर—सब समझा दिया है। अभी यहाँ का कायदा नहीं जानती इसीलिये कल कुछ बक गई है। अब आपही इसकी माता हैं चाहे मारें चाहे जो करें। मुझसे क्या मतलब रहा।

राजरानी—तुम तो ठीक कहते हो, जब यह भी ऐसा ही समझे तब न?

चन्द्रशेखर—न समझेगी तो आप नुकसान उठावेगी।

इसके बाद राजरानी चली गई और चन्द्रशेखर भी जाने को उद्यत हुए। पिता को उठते देख रतनमाला की आँखों में जल भर आया। उस समय उसके मुँह से तो कोई शब्द न निकले। पर उसकी आँखों की मूक वाणी का अर्थ चन्द्रशेखर समझ गये थे। उसका यही अर्थ था—शीघ्र कोई प्रबन्ध न करोगे तो प्राण दे दूँगी।

बारहवां परिच्छेद

रतनमाला ने देखा कि इस घर में उसका ही नहीं उसके पति का भी बड़ा अनादर है। वे बड़े भाई हैं लेकिन घर के नौकर चाकर उनकी उतनी परवाह नहीं करते जितनी रामधारी की। रामधारी कभी अपने हाथ से रस्सी डोल नहीं छूता। वह नहाने के लिये बैठ जाता है और नौकर उसके लिये पानी भरने लगते हैं। पर उसके पति देव से कोई यह भी नहीं पूछता कि आप नहायँगे या नहीं। उन्हें अपने नहाने के लिये स्वयं पानी भरना पड़ता है। नहाना ही क्या खाने पीने में भी यही होता है। सब लोग खा पी चुकते हैं तो उनकी बारी आती है, कभी कभी देर हो जाने के कारण उन्हें बिना खाये ही स्कूल जाना पड़ता है। उनके रहने का जो कमरा है वह भी बड़ी रद्दी हालत में है और रामधारी को सबसे सुन्दर घर मिला है। दुलारी की इस घर में बड़ी इज्जत है; लेकिन दुलारी जैसी लड़कियाँ उसके स्कूल में पंखा खींचती थीं। राजरानी जैसी अपढ़ स्त्रियों से वह कभी बोली तक न थी। उसे कब मालूम था कि ऐसी गँवारिनी की पुत्र-बधू बनकर उसे रोना पड़ेगा।

शाम को जब देवधारी ने गृह में प्रवेश किया तो उसने कहा—पिता जी आज कल स्कूल आते हैं?

देवधारी—हाँ, आते तो हैं।

रतनममाला—कुछ कहते थे?

देवधारी—कहते थे कि बेटी को कोई तकलीफ न होने पावे।

रतनमाला—और कुछ नहीं कहते थे ?

देवधारी—और क्या चाहती हो ?

रतनमाला—क्या उन्हें मालूम है कि मैं यहाँ रहना नहीं चाहती हूँ।

देवधारी—क्यों ? मुझे छोड़कर चली जाओगी ?

रतनमाला—जाना ही पड़ेगा।

देवधारी—तुम्हें मेरी याद न आयेगी ?

रतनमाला—नहीं।

देवधारी—मगर मैं तो तुम्हारे बिना किसी काम का न रह जाऊँगा।

रतनमाला—और मैं यहाँ रह कर मर गई तो ?

देवधारी—मरोगी कैसे ? मैं रात दिन ईश्वर से तुम्हारे लिये प्रार्थना करता हूं।

रतनमाला—ईश्वर से प्रार्थना करते हो, मगर अपनी माँ से कुछ नहीं कह सकते हो ?

देवधारी—माँ का स्वभाव ही चिड़चिड़ा है। इसके लिये क्या करूँ ?

रतनमाला—स्वभाव केवल मेरे ही लिये चिड़चिड़ा है या सब के लिये ?

देवधारी—सब उसके स्वभाव को सहन कर लेते हैं इसी लिये सब को चिड़चिड़ा नहीं मालूम होता।

रतनमाला—यह बात नहीं है। किन्तु यदि मैं यह भी मान लूँ तो क्या यह आवश्यक है कि उनकी बात सब लोग सहन करें ?

देवधारी—मेरी समझ में तो अवश्य आवश्यक है। बड़ों की बात सहन करने में कोई बुराई नहीं है।

रतमाला--तो आप शौक से सहा करें ?

देवधारी--हमारा तुम्हारा क्या कुछ बाँटा है ?

रतनमाला—बाँटा हो चाहे नहीं, मैं तुम्हारी माता की अनुचित बातों की नहीं सह सकती।

देवधारी--मेरे लिये भी नहीं ?

रतनमाला--नहीं।

देवधारी—तो फिर तुम्हीं बताओ क्या करूँ ? मैं माता का मुँह तो नहीं पकड़ सकता ?

रतनमाला--जब यह जानते थे तो मेरे साथ क्यों व्याह किया ?

देवधारी—कहाँ जानता था ? मैं तो समझता था कि जैसे तुमने मेरे हृदय में घर कर लिया है वैसे ही माता के हृदय को भी जीत लोगी।

रतनमाला—स्त्री में पुरुष के हृदय के जीतने की शक्ति होती है। मगर स्त्री, स्त्री के हृदय को नहीं जीत सकती।

देवधारी—यह बात नहीं है, स्त्री दोनों का हृदय जीत सकती है।

रतनमाला—कैसे ?

देवधारी—अपने सौन्दर्य से पुरुष का और अपने गुणों से स्त्री का।

रतनमाला—आपकी समझ में मुझ में कुछ ऐसे ऐब हैं जो यदि दूर हो जायँ तो आपकी माता प्रसन्न रह सकती हैं ?

देवधारी—मैं तुमको दोषी नहीं ठहरा सकता।

रतनमाला—दो में एक को तो दोषी ठहराना ही पड़ेगा ? या मैं दोषी हूं या तुम्हारी माता ?

देवधारी—माता पिता में कोई दोष भी हो तो पुत्र को उससे सम्बन्ध न रखना चाहिये ?

रतनमाला—अर्थात् माता पिता यदि राक्षस हों तब भी पुत्र को यही समझना चाहिये कि वे देवता हैं ?

देवधारी—हाँ।

रतनमाला—तो तुमने नाहक पूज्य माता पिता को कष्ट देने के लिये मुझे सनाथ किया।

देवधारी—सम्भव है कि मुझसे भूल हुई हो।

रतनमाला—सरासर भूल हुई है।

देवधारी—किन्तु अब क्या इस भूल का सुधार हो सकता है ?

रतनमाला—क्यों नहीं हो सकता।

देवधारी—कैसे ?

रतनमाला—माता पिता से अलग रहने की व्यवस्था करो।

देवधारी—ऐसा भी कहीं हो सकता है ? लोग कहेंगे दुलहिन के आते देर नहीं हुई कि वृद्ध माता पिता से अलग हो गये। कितनी बदनामी होगी ?

रतनमाला—तुम नहीं अलग हो सकते तो मेरे ही अलग रहने की व्यवस्था करो।

देवधारी—मैंने तो पहिले ही कह दिया कि मुझमें और तुम में अब कोई अन्तर नहीं है। जो तुम हो वही मैं हूं और जो मैं हूं वही तुम हो।

रतनमाला—यदि तुम्हारा यह कहना सही होता तो तुम्हारी माता मुझे जो कष्ट दे रही हैं उसका तुम अवश्य अनुभव करते।

देवधारी—तुम नहीं जानती हो कि मैं तुमको दुःखी देख कर कितना दुःखी होता हूं।

रतनमाला—फिर भी दुःख निवारण का कोई यत्न न करोगे?

देवधारी—कुछ सोच विचार करने का मौका दो। अभी तक मैं कभी दुःखी नहीं हुआ था। इसी लिये दुःख दूर करने की कभी तरकीब भी कुछ नहीं सोची।

रतनमाला—क्या कहते हो! तुम जानते नहीं हो कि तुम्हें घर में सबसे बाद को भोजन मिलता है?

देवधारी—जानता हूं।

रतनमाला—इससे तुम दुःखी नहीं होते हो।

देवधारी—इसमें तो दुःखी होने की कोई बात नहीं है। अपना घर है। चाहे जब खाना मिलेगा। ऐसे ही दुःखी होने लगें तो जिन्हें पहले भोजन मिलता है वे यह सोच कर दुःखी हो सकते हैं कि उन्हें पहले ही क्यों बुलाया जाता है। फिर किसी न किसी को तो अन्त में मिलेगा ही।

रतनमाला—तो क्या अन्तिम आदमी तुम्हीं हो?

देवधारी—यह भी तो एक बुराई ही होगी यदि मैं किसी और को कह दूं।

रतनमाला—मुझे नहीं मालूम था कि तुम्हें अपने मान अपमान का बिल्कुल ख्याल नहीं है।

देवधारी—घर में कैसा मान अपमान?

रतनमाला—तो तुमसे जितना सहते बने सहो पर मुझे···।

देवधारी—तुम्हें भी सब सहना चाहिये। सच पूछा जाय तो स्त्री के लिये सहनशीलता की जितनी आवश्यकता है उतनी पुरुष के लिये नहीं।

रतनमाला—सहनशीलता की आवश्यकता उस स्त्री के लिये हो सकती है जो असमर्थ है, अपाहिज है।

देवधारी—किन्तु समर्थ स्त्री को भी क्षमा-शील होना चाहिये।
यदि तुम क्षमा कर सकती हो तो तुम देवी हो।

रतनमाला—मैं कुछ नहीं कर सकती।

देवधारी—कुछ न कुछ तो करना ही पड़ेगा।

यह कहते हुए देवधारी ने रतनमाला के पलँग पर बैठने की चेष्टा की।

रतनमाला—कृपा करके दूर ही रहियेगा। जब तक कोई उचित प्रबन्ध न हो जाय मुझे स्पर्श न कीजिये।

देवधारी जहाँ के तहाँ खड़े रह गये। रतनमाला बड़ी देर तक क्रोधपूर्ण दृष्टि से, पति की ओर देखती रही। देखते ही देखते उसकी आंखें लग गईं। और वह एक विचित्र प्रकार का स्वप्न देखने लगी। उसने देखा—

मानों वह नूरमुहम्मद के बाग में—बैठी है। नूरमुहम्मद की दादी भी उसके पास आकर बैठ गई है और कह रही है—बेटी! हिन्दू और मुसलमान से कुछ नहीं होता। दोनों ही खुदा के बन्दे हैं। दोनों को खुदा ने बनाया है। जो तुझे अच्छा मालूम हो उससे मुहब्बत कर। जहाँ सच्चा इश्क है वहाँ जात पाँत का क्या विचार। इसके बाद उसने देखा—पानी बरसने लगा। वह घर जाने के लिये तैयार होगई। उसी बरसात में नाला बढ़ गया। पर उस पर नूरमुहम्मद नाव लिये डटा है और कह रहा है—चली आओ, मैं तुमको बेधड़क इस नाले के पार कर दूँगा। बड़ा चतुर नाविक हूं। यह सुन कर मानों वह नाव पर चढ़ गई। पर नाला बड़े वेग से बह रहा था। नाव

सँभल नहीं सकी। धार में पड़ गई और यमुना में जा गिरी। यह देख कर मानों नूरमुम्मद उसे छोड़ कर भाग गया। वह अकेली रह गई और रोने लगी। तब मानों देवधारी ने तैर कर नाव को पकड़ लिया और बड़ी मुश्किल से उसे किनारे किया। इसी प्रकार उसने न जाने क्या क्या देखा।

जब सबेरा हुआ और उसकी आँख खुली तो उसने देखा कि देवधारी अपनी धोती का एक भाग बिछाये फर्श पर पड़े सो रहे हैं। उसे शाम की सब बातों का स्मरण हो आया। उसने कहा था—मुझे स्पर्श मत करना, दूर रहना। इसी लिये पतिदेव पृथ्वी पर पड़े हैं। यह देख कर रतनमाला का गला भर आया। उसने मन ही मन कहा—आह! मैं कितनी निठुर हूँ। मैं कैसे सो गई? स्वामी धूल में लोटते रहे और मैं सुख की नींद सोती रही। क्या स्त्री का अपने पति के प्रति यही कर्त्तव्य है? मैं इसका क्या उत्तर दे सकती हूँ? वह झटपट उठी और पति के चरणों पर सिर रख कर रोने लगी। पाँव में गरम गरम आँसू पड़ने से देवधारी की नींद खुली गई। उन्होंने देखा कि रतन-माला उनके पैरों पर सिर रक्खे रो रही है। यह देख कर उन्हें विस्मय भी हुआ और शोक भी। उन्होंने उसे धीरे से उठाया और पूछा क्यों रो रही हो?

रतनमाला—तुम ज़मीन पर क्यों सोये?

देवधारी—कहाँ सोता? और कोई चारपाई तो यहाँ थी नहीं?

रतनमाला—मैंने तो गुस्से में कहा था कि मुझे मत छूना।

देवधारी—यह मुझे मालूम था, पर यदि उस समय तुम्हें छू लेता तो तुम्हारा गुस्सा और न बढ़ जाता?

रतनमाला—मैं तो जल्दी ही सोगई थी, उसके बाद तुम पलँग पर आ सकते थे।

देवधारी—पहले मेरी यही इच्छा हुई थी। फिर मैंने सोचा कहीं ऐसा न हो कि तुम जग उठो। जब आदमी बीच में जग उठता है तो उसे नींद नहीं आती। इसी लिये मैं और डर रहा था।

रतनमाला—मैं तुमको बहुत दुख देती हूँ।

देवधारी—कौन कहता है? मैं तो समझता हूँ कि मेरे सब सुखों का कारण केवल तुम्हीं हो।

रतनमाला—अब तुम्हें कभी न सताऊँगी। जहाँ तक सहते बनेगा सहूँगी।

देवधारी—ईश्वर तुममें सब कुछ सहने की शक्ति दे।

रतनमाला—आज मैंने एक बड़ा भयङ्कर स्वप्न देखा?

देवधारी—क्या?

रतनमाला—मानों मैं अकेली यमुना में डूब रही थी। तुमने तैर कर मेरी जान बचाई। और भी न मालूम क्या क्या देखा था जो याद नहीं आ रहा है।

देवधारी—चिन्ताओं में डूबी रहती हो उसी का प्रतिबिम्ब स्वप्न में देखा होगा। मैं तो अपने को बड़ा भाग्यवान समझूंगा जिस रोज तुम्हारी सारी चिन्ताएँ दूर हो जायँगी।

इसके बाद देवधारी बाहर चले गये। रतनमाला भी बाहर निकल कर गृहकार्य्य में संलग्न हो गई। यद्यपि राजरानी ने उसके देर से उठने की कड़ी आलोचना की पर आज उसने कुछ ध्यान नहीं दिया।

अभी तक भोजन दुलारी ही बनाया करती थी। दुलारी बड़ी सीधी थी। वह सब की बात चुप चाप सह लेती थी। जब कोई बात उसके लिये असह्य हो जाती थी तो वह अपने कमरे में चली जाती थी और खूब सिसक सिसक कर रोती थी। वह रतनमाला को हमेशा दीदी कहती थी और उसे

भोजन करा कर आप खाती थी। यद्यपि इस घर में आने के बाद सात आठ दिन तक उसका खूब सम्मान हुआ था पर उसके बाद उसको कड़ी यन्त्रणा मिलने लगी थी। वह राजरानी की सेवा में निरन्तर लगी रहती थी पर श्रद्धा और भक्ति के कारण नहीं—असल में वह राजरानी से बहुत डरती थी। डरने का एक कारण और भी था। रामधारी उसको ज़रा भी प्यार नहीं करता था। जिस स्त्री को पति भी नहीं प्यार करता उसकी घर में बड़ी दुर्दशा होती है। उसे चारों तरफ अन्धकार ही अन्धकार दिखाई पड़ता है।

दुलारी ने इसी अन्धकारमय जीवन में रतनमाला का दर्शन किया था। जब पहले ही रोज रतनमाला ने सास को मुँह तोड़ उत्तर दिया तो वह बड़ी प्रसन्न हुई थी। क्योंकि वह कई बार चाहते हुए भी सास की बातों का उत्तर न दे सकी थी। रतनमाला से जो वह प्रसन्न रहती थी उसका यही कारण था कि वह अत्यन्त त्रास देने वाली सास से भिड़ जाती थी।

जब से रतनमाला आई है तब से राजरानी दुलारी से कुछ खुश रहने लगी है। पर उसे राजरानी के खुश और न खुश रहने की इतनी परवाह नहीं थी जितनी पति की अप्रसन्नता की थी। वह अत्यन्त सहनशील थी, नम्र थी, रात दिन सेवा में लगी रह सकती थी, फिर भी रामधारी उससे सन्तुष्ट न होता था। असल में वह शहराती हो गया था और उसे दुलारी जैसी देहाती औरत पसन्द न थी।

दुलारी अपने मन में सोचा करती थी कि रतनमाला जो घर में किसी को नहीं दबती है इसका यही कारण है कि उसे पतिदेव का पूर्ण प्रेम प्राप्त है। यदि वह भी रतनमाला की भाँति पति को प्यारी होती तो किसी को कदापि न दबती। कभी

कभी वह यह भी सोचा करती थी कि रतनमाला पति को वश में करने की कोई विद्या जानती है। यह विद्या सीखने की इच्छा से भी वह रतनमाला को खुश रखना चाहती थी।

आज जब वह भोजन बनाने चली तो राजरानी ने कहा—तू क्या बाँदी होकर आई है जो हमेशा खाना पकाएगी?

इस पर रतनमाला रसोई घर की ओर जाने लगी। पर दुलारी ने आगे बढ़ कर उसके कान में कहा—दीदी तुम बैठो, सास जी को बकने दो। तुम बहुत सुकुमार हो इतना खाना नहीं पका सकोगी। मेरे लिये यह कोई बड़ा काम नहीं है।

यद्यपि दुलारी ने इन बातों को अपनी समझ में बहुत धीरे से कहा था पर सास के कानों में इसकी कुछ भनक पड़ गई। उसने कहा—खाना पकाने कौन जाता है?

दुलारी ने झट कह दिया—खाना मैं ही पकाऊँगी।

यह सुनना था कि राजरानी आग बबूला हो गई। उसने कहा—तू खाना पकाएगी और अपनी उस मालकिन को बैठाल देगी मुझसे लड़ने के लिये।

दुलारी चुपचाप रसोई घर में चली गई। रतनमाला ने भी उसका पीछा किया। रतनमाला के सिवाय आज तक दुलारी के साथ इतनी सहानुभूति किसी ने नहीं दिखलाई थी।

रसोई घर में दुलारी ने अपना दुखड़ा रोना शुरू कर दिया। रतनमाला उसको सान्त्वना देने लगी। थोड़ी देर के बाद राजरानी ने भी पदार्पण किया और दुलारी का झोंटा पकड़ कर इधर उधर घसीट दिया। रतनमाला से यह न देखा गया। उसने कहा—संसार में आप ही भर सास नहीं हैं?

राजरानी उसकी तरफ भी बढ़ी पर रतनमाला दौड़ कर

बाहर निकल आई। उस समय रामधारी आँगन में खड़ा था। उसने पूछा—क्या मामला है?

रतनमाला—तुम्हारी माता अब बहुत अत्याचार कर रही हैं।

रतनमाला के मुख से ये वाक्य सुनकर राजरानी जलता हुआ चैला लेकर बाहर आगई और उसे भी मारने दौड़ी। उस समय रामधारी उसे पकड़ न लेता तो न मालूम क्या हो जाता।

इस झगड़े का परिणाम यह हुआ कि बड़ी देर तक खाना नहीं बना। जब देवधारी भूखे ही स्कूल जाने लगे तो रतनमाला ने राजरानी से कहा—कल शाम को कहीं से मिठाई आई थी। अभी रक्खी होगी।

राजरानी—तेरे बाप के यहाँ से नहीं आई थी। और न वह मिल सकती है, रक्खी हो चाहे नहीं।

देवधारी यह सुनते ही घर से बाहर होगये। उस रोज़ रतनमाला ने भी भोजन नहीं किया।
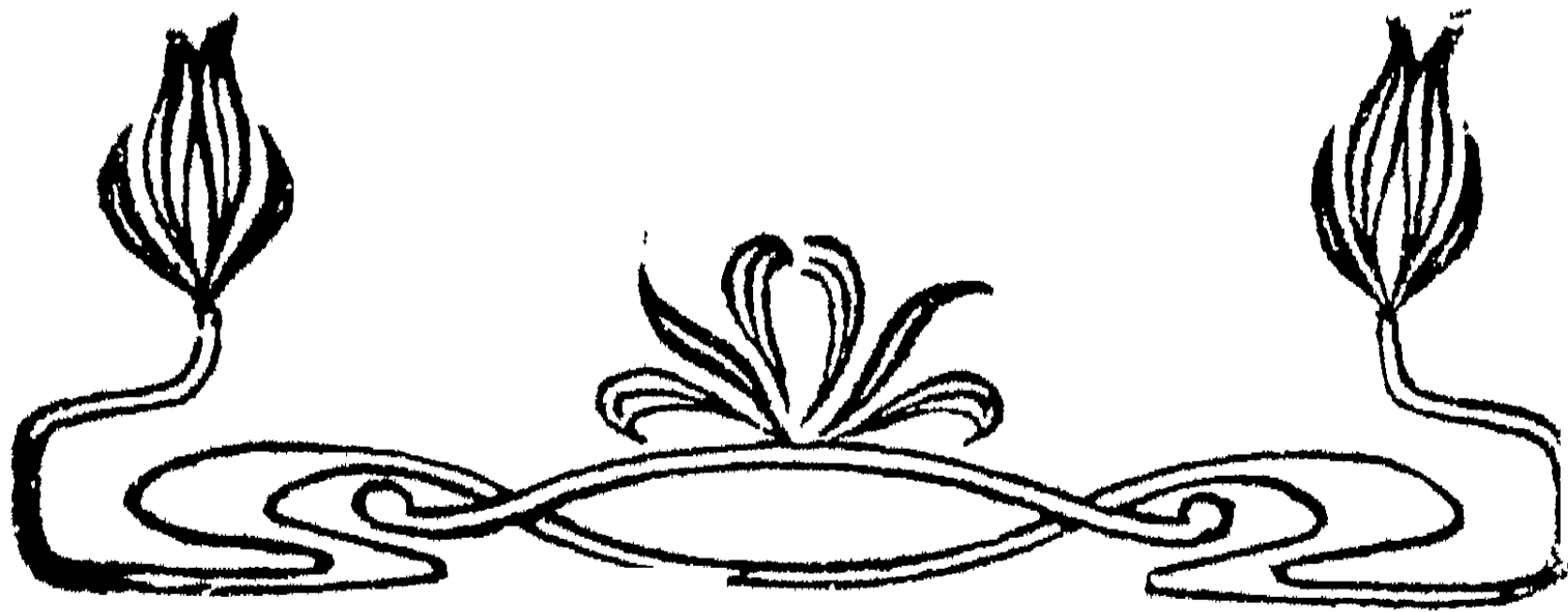
तेरहवां परिच्छेद

जब नूरमुहम्मद रतनमाला को फुसला न सका और उसकी सारी चेष्टाएँ निष्फल गईं तो उसने निश्चय किया कि अब चाहे जिस प्रकार होगा इसे बलपूर्वक पकड़ ले जायँगे। उसने सोचा था—जब वह स्कूल जाते समय गाड़ी पर चढ़ने के लिये निकलेगी तभी कुछ आदमी लाकर उसे पकड़वा दूँगा। सब आदमी उसे लेकर बात की बात में नाले के पार आ जायँगे। उसके मुहल्ले में कोई ऐसा नहीं है जो मेरे आदमियों के मुकाबिले में खड़ा होगा। फिर नाले के इस पार आते ही फौरन सब को मोटर में बिठा कर दूसरी जगह पहुँचवा दूँगा। बाद को यदि किसी प्रकार की जाँच-पड़ताल भी शुरु हुई तो कोई कुछ पता न पा सकेगा। परन्तु इमली के पेड़ के नीचे बैठे हुए दही बेचने वाले को मार कर उसने अपनी दवा अपने आप कर ली। जब वह उसको मार रहा था तभी जमना के उस पार से आने वाले कुछ लोगों न उसे देख लिया था। पुलिस का सिपाही भी घटनास्थल पर आ गया था। परिणाम यह हुआ कि नूरमुहम्मद उस खून के मामले में फँस गया। वह बहुत धनी आदमी था। पानी की भाँति उसने रुपया बहाकर बड़ी मुश्किल से अपनी रक्षा की। वह इस मामले में फँसा ही था कि रतनमाला का ब्याह होगया। दही बेचने वाले ने अपनी जान देकर अप्रत्यक्ष रूप से एक हिन्दू स्त्री की जो रक्षा की, उसकी प्रशंसा करने वाला कोई नहीं है और न कोई उसके परिवार को उसके जीवन का

मूल्य देने वाला है। पर इससे क्या ? उसकी मृत्यु व्यर्थ में नहीं हुई। यदि वह न मरता तो रतनमाला विधर्मी के हाथ में अवश्य पड़ जाती।

रतनमाला के विवाह का समाचार सुनकर नूरमुहम्मद को जो दुःख हुआ उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। वह एक प्रकार से पागल सा हो गया। उसके दिल में सिवाय इसके कि रतनमाला कब मिलेगी और कैसे मिलेगी और कोई बात ही न रह गई। माधी प्रयाग से बहुत दूर नहीं था। एक रोज वह अपनी दो-नली बन्दूक लेकर घूमता घामता वहाँ जा पहुँचा।

दिन के दस बजे थे, घर के सब लोग खाना खा चुके थे। बैजनाथ मिश्र खेत पर चले गए थे। रामधारी भी मालूम नहीं कहाँ थे। देवधारी स्कूल के रास्ते पर थे। नूरमुहम्मद को देख कर वे बड़े प्रसन्न हुए। यद्यपि देरी हो रही थी, फिर भी वे उससे बात करने के लिये ठहर गये। पूछा—इधर कैसे आ निकले ?

नूरमुहम्मद—सुनता हूं इधर हरिण बहुत हैं। दो एक मारना चाहता था, पर कहीं कुछ पता न चला। सबेरे से ही घर से निकला हूं।

देवधारी—अभी कुछ खाना पीना भी न हुआ होगा ?

नूरमुहम्मद—कहाँ ? अभी दाँतौन तक नहीं हुई।

देवधारी—भोजन इत्यादि के लिये घर में कहता आऊँ ?

नूरमुहम्मद—इरादा तो अब वापस लौट जाने का है। कुछ मिलने मिलाने की उम्मीद नहीं रही।

देवधारी—थके हुए कहाँ जाइएगा, कुछ आराम कर लीजिये।

यह कह कर देवधारी मकान के अन्दर गये और बोले—माँ ? रसोई उठा दी गई ?

राजरानी—उठा न दी जायगी, अब तक को रक्खी रहेगी ?

देवधारी—कुछ खाना बचा है ?

राजरानी—ऐसे बीर खाने वाले एकत्रित हो गये हैं कि चाहे जितना खाना बने, बासी नहीं बच सकता ।

देवधारी—प्रयाग से एक महाशय आए हैं, उनके लिये कुछ खाना बनवा दो ?

राजरानी—कौन है ?

देवधारी—एक मुसलमान है ।

राजरानी—मुसलमान का खाना हमारे घर में नहीं पक सकता ।

देवधारी—वे चन्द्रशेखर के बड़े दोस्त हैं ।

राजरानी—दोस्त हों चाहे दुश्मन । उनसे कहदो जायँ ।

देवधारी—लोग क्या कहेंगे ?

राजरानी—लोगों के कहने की कहाँ तक सुनूँगी ? एक न एक रोज आते ही रहेंगे, कैसे काम चलेगा ?

देवधारी—कौन आता है मैं तो किसी को नहीं देखता ?

राजरानी—नहीं आता तो अपनी औरत को लेकर अलग हो जाओ और जिसको चाहो बुलाओ ।

देवधारी—उनसे खाने के लिये कह पड़ा हूं आज बनवा दो ऐसा ही होगा तो शाम को मैं ही नहीं खाऊँगा ?

राजरानी—कहते ही हो तो आटा दाल दिलवाए देती हूं कहीं पका लेगा ?

देवधारी—अरे वह बड़ा अमीर आदमी है अपने हाथ से कहीं खाना पका सकता है?

राजरानी—मैं ने तो कह दिया कि मेरे रसोई घर में मुसलमान के लिये खाना नहीं पक सकता?

देवधारी—चौपाल की कोठरी में इन्तिजाम करवा दो।

राजरानी—वहाँ कौन पकाने जायगा?

देवधारी ने रतनमाला की ओर देखा। वह पति के मन का भाव ताड़ गई। बोली—मैं पकादूंगी।

राजरानी—तू क्यों न पका देगी। तेरा तो पुराना यार होगा?

रतनमाला ने कोई उत्तर नहीं दिया। देवधारी इस बात को जानते थे कि जब नूरमुहम्मद चन्द्रशेखर से मिलने आता था तो रतनमाला उससे पर्दा नहीं करती थी। अतएव वे रतनमाला से बोले—तुम्हारा तो भाई ही लगता होगा। क्या तुम उससे पर्दा करोगी?

रतनमाला—देखा जायगा। किसी प्रकार खाना पकाऊँगी ही।

देवधारी स्कूल चले गये। नूरमुहम्मद के नहाने इत्यादि का प्रबन्ध कर गये थे। चौपाल में उसके लिये एक चारपाई बिछा दी गई थी। नहा धोकर वह उसी पर आ बैठा और बीड़ी पीने लगा। उस समय रतनमाला सामने ही एक कोठरी में खाना बनाने के लिये आग जला रही थी। उसकी ओर सतृष्ण नेत्रों से देख कर नूरमुहम्मद ने बीड़ी बुझा दी और घबड़ाये हुए चोर की भाँति इधर उधर देखा। चारो तरफ सन्नाटा था। वह बोला—रतनमाला!

रतनमाला 'हाँ' कहना चाहती थी पर न मालूम क्यों न कह सकी।

नूरमुहम्मद ने फिर कहा – रतनमाला अब क्यों डरती हो ?

रतनमाला—डरती तो आप के लिये खाना पकाने क्यों आती।

नूरमुहम्मद—खाना तुम्हीं को पकाना पड़ता है क्या ?

रतनमाला—हाँ !

नूरमुहम्मद—या खुदा ! मैं अपने कानों से क्या सुन रहा हूं !

रतनमाला इस बार चुप रही।

नूरमुहम्मद फिर बोला—प्यारी रतनमाला ! अगर अल्लाह ने तुम्हें मेरी बनाया होता तो आज तुम्हारी यह बुरी हालत न होती ? मैं कहता हूं। अब भी मान जाओ। मेरे यहाँ तुम भी सुख से रहोगी और मेरा भी जन्म बन जायगा।

रतनमाला सिर नीचा किये सब सुन रही थी। नूरमुहम्मद फिर कहने लगा—बोलो प्यारी, बोलो। मैं मर रहा हूं। तुम्हारे इश्क में चूर हूँ। मेरे साथ चलोगी ?

रतनमाला सास के अत्याचारों से ऊब गई थी। चन्द्रशेखर बुलाने को कह गये थे पर उन्होंने उसकी खबर न ली थी। पानी में डूबता हुआ आदमी एक बार सिर बाहर निकाल कर साँस लेने के लिये मगर की दुम पकड़ने की चेष्टा करता है फिर नूरमुहम्मद तो आदमी था। रतनमाला के मुँह से निकल गया—कैसे चलूँगी ?

नूरमुहम्मद—आह प्यारी ! चलने के सैकड़ों उपाय हैं। आज ही चाहो तो चल सकती हो।

रतनमाला--आज कैसे ?

नूरमुहम्मद--जब घर के सब लोग सो जायँगे। मेरे पास उठकर चुपचाप चली आना। दोनों आदमी चल देंगे।

यह सुनते ही रतनमाला का शरीर काँप उठा। उसके रोंगटे खड़े होगये। और उसके मुँह से शब्द न निकल सके। उसने मन ही मन कहा--राजरानी ! आज तुम्हारे ही कारण मैं एक विधर्मी के हाथ में पड़ रही हूं। क्या करूँ ? और कोई उपाय ही नहीं रहा है। पतिदेव से बहुत बिनती की कि तुमसे अलग होकर रहें पर वे तुम्हारे अनन्य भक्त हैं। मेरी क्यों सुनेंगे ? आखिर उनको भी पछताना पड़ेगा। अब आज चली जाऊँगी। कुछ रोज और सब्र करो। जब तुम्हारा अत्याचार असह्य हो जायगा तो एक रोज दुलारी भी मेरी ही भाँति किसी के पीछे चल देगी। फिर देखे तुम किसको सताती हो ? हम बहुओं की जो बदनामी होगी, हमारे मुख में जो कौरिख लगेगा उससे तुम बच नहीं सकती हो। हमारी आत्मा जो शाप दे रही है वह तुम्हारे शिर पर भूत बन कर सवार हो जायगा और तुमको नचा नचा कर मारेगा। इसके थोड़ी ही देर बाद उसके हृदय में देवधारी की स्मृति जाग उठी, उसने सोचा--आह, वे कैसे सीधे हैं। क्रोध करना तो वे जानते ही नहीं। मेरे चले जाने पर उनकी क्या दशा होगी ? मेरे लिये वे तड़प तड़प कर मर जायँगे। उनको छोड़ कर चले जाना क्या उचित होगा। मैं कदापि न जाऊँगी जो होगा सब सह लूँगी।

इधर रतनमाला इन विचारों में तल्लीन हो रही थी उधर नूरमुहम्मद अपनी कामयाबी पर बड़ा प्रसन्न हो रहा था। उसने दूसरी बीड़ी जलाई और धुँवे के साथ अपने खयाल का

एक बादल बनाने लगा। उसने दोनों तरफ से अपनी आधी कटी मूँछों पर हाथ फेरते हुए मन ही मन कहा—रतनमाला, तू जानती नहीं। मैं कौन हूं? मैंने तुझ जैसी कितनी ही लौंडियों को रास्ता बताया है। तेरी गिनती क्या है। अब देखूँगा, तेरी फिलासफ़ी कहाँ जाती है? जिससे तू भागती थी, अब दौड़ दौड़ कर उसी के गले से लगेगी और उसी पर नाज़ करेगी। जब तू मेरी बगल में बैठेगी और मेरी ओर देख देख के मुस्करायगी तो मैं तेरे दोनों हाथों को पकड़ कर तेरा मुँह चूम लूँगा और कहूँगा—इतना परेशान किया? पहले ही राज़ी हो जाती तो क्या होता, बेवफा!

नूरमुहम्मद इसी प्रकार के ख्यालों में उड़ा चला जा रहा था कि रतनमाला ने यह कह कर कि मैं नहीं चल सकती, मानो उसको परकैंच करके गिरा दिया। उसके मनसूबे बिजली की भाँति चमक कर गायब होगये। वह बोला—क्यों प्यारी, क्यों तुम्हारा कैसा दिल है छिन छिन पर विचार बदलते हैं।

रतनमाला—अब मैंने यह निश्चय कर लिया है कि मैं किसी की पत्नी बनकर नहीं रहूँगी। अकेली रहूँगी।

नूरमुहम्मद—और यह चिराग सा जलता हुआ हुस्न किसी के काम न आएगा?

रतनमाला—चिराग भी बुझ जाता है और यह हुस्न भी बुझ जायेगा। इसमें कुछ नहीं है।

नूरमुहम्मद कुछ कहने ही वाला था कि बैजनाथ मिश्र के पाँवों की आहट पाकर वह चुप होगया। बैजनाथ उसे न पहचानते थे। अतएव वे बिना उससे कुछ बोले सीधे घर में गये। उन्होंने देखा कि राजरानी क्रोध से लाल हो रही है, वे इसका

कुछ कारण न समझ कर बोले—क्यों नाराज हो रही हो, बाहर कौन आया है?

राजरानी—बाहर तुम्हारी पतोहू का पुराना यार आया है और कौन है? मैं तो पहले ही कहती थी कि पतुरिया है। इसका छुआ खाकर हम लोग तो बेधर्म हो गये।

बैजनाथ—आखिर मामला क्या है?

राजरानी—बड़े भोले हो, जाकर उसी से पूछो न? कोई मर्द घर में नहीं था इसी से चुप रह गई नहीं तो इसे यहाँ बैठने देती?

बैजनाथ—बहू उसके पास क्या कर रही है?

राजरानी—उसी की बहू है। उसी की होकर रहेगी मैंने छिप कर सुना है। उसके साथ निकल जाने को तैयार है।

बैजनाथ—ज़रा उसे यहाँ तो बुलाओ।

राजरानी ने बड़ी मुश्किल से अपना क्रोध दबा कर कहा—यहाँ आओ खाना पक चुका हो तो, एक जरूरी काम है।

सास के आज्ञानुसार रतनमाला आँगन में पहुँची। बैजनाथ ने दाँत पीसते हुए कहा—किसने तुमको चौपार में खाना पकाने के लिये कहा था?

रतनमाला ने जमीन की ओर देखते हुए कहा—किसी ने नहीं।

बैजनाथ—तुम्हारे जो मन में आएगा करोगी?

रतनमाला—वे मेरे माइके के आदमी हैं।

बैजनाथ—माइके के आदमी ही हैं, तुम्हारे भतार तो नहीं हैं?

रतनमाला—यह कौन कहता है।

राजरानी—मैं कहती हूँ मैं, तुमने उससे क्या कहा था?

रतनमाला—कुछ भी नहीं, उन्हीं से पूछ लो।

बैजनाथ—वे क्यों बताने लगे! हाय!! नाक कट गई!!

राजरानी—जाओ! मेरे घर से निकल जाओ! उसी के साथ रहो।

रतनमाला—आप इसी प्रकार सताती रहेंगी तो निकल ही जाना पड़ेगा।

राजरानी पहले ही बड़े गुस्से में थी। पर किसी प्रकार अपना गुस्सा रोके हुए थी। रतनमाला के मुख से ये शब्द सुनते ही उसका क्रोध बाँध तोड़ कर बाहर निकल पड़ा। उसने रतन-माला का झोंटा पड़क कर कहा—असल बाप की हो तो अभी मेरे घर से निकल जा।

रतनमाला चुपचाप खड़ी रही।

राजरानी ने उसे धक्का दे दे कर चौपाल में ला खड़ा किया और नूरमुहम्मद से कहा—ले अपने प्यारी को पकड़। इसे समझा दे। अब यदि यह मेरे घर में घुसेगी तो इसका प्राण ले लूँगी।

रतनमाला जोर जोर से रोने लगी। उसने रोते हुए कहा—सास जी! उनको आने दो। वे कहेंगे तो चली जाऊँगी तब तक सब्र करो।

राजरानी—वह कौन होता है?

रतनमाला—तुम्हीं कृपा करो! शाम तक और घर में रहने दो।

राजरानी—एक मिनट न रहने दूंगी! राँड़ पतुरिया! चाँडालिन, दूर हो।

नूरमुहम्मद यह सुन कर भौचक्का सा रह गया। वह मारे

भय के उठ खड़ा हुआ और अपनी बन्दूक संभाल कर जाने लगा।

राजरानी ने कहा—इसे भी साथ लेता जा। यह तेरे बिना यहाँ कैसे रहेगी ? अकेले क्यों चला जाता है ?

यह कह कर वह रतनमाला को नूरमुहम्मद की ओर ढकेलने लगी। रतनमाला को भी गुस्सा आगया। गुस्से में आदमी आगा पीछा नहीं सोचता। वह नूरमुहम्मद के पीछे चल पड़ी। देखते देखते ही दोनों ओझल होगये।

अब बैजनाथ ने सोचा कि मुसलमान के साथ उसे जाने देना ठीक नहीं है। इसमें बड़ी बदनामी होगी। घर से उसे निकालना ही होगा तो उसके बाप के घर भेज देंगे। वे आगे बढ़े। पर अब क्या हो सकता है। रतनमाला नूरमुहम्मद के साथ इक्के पर बैठ कर न मालूम किधर चली गई।
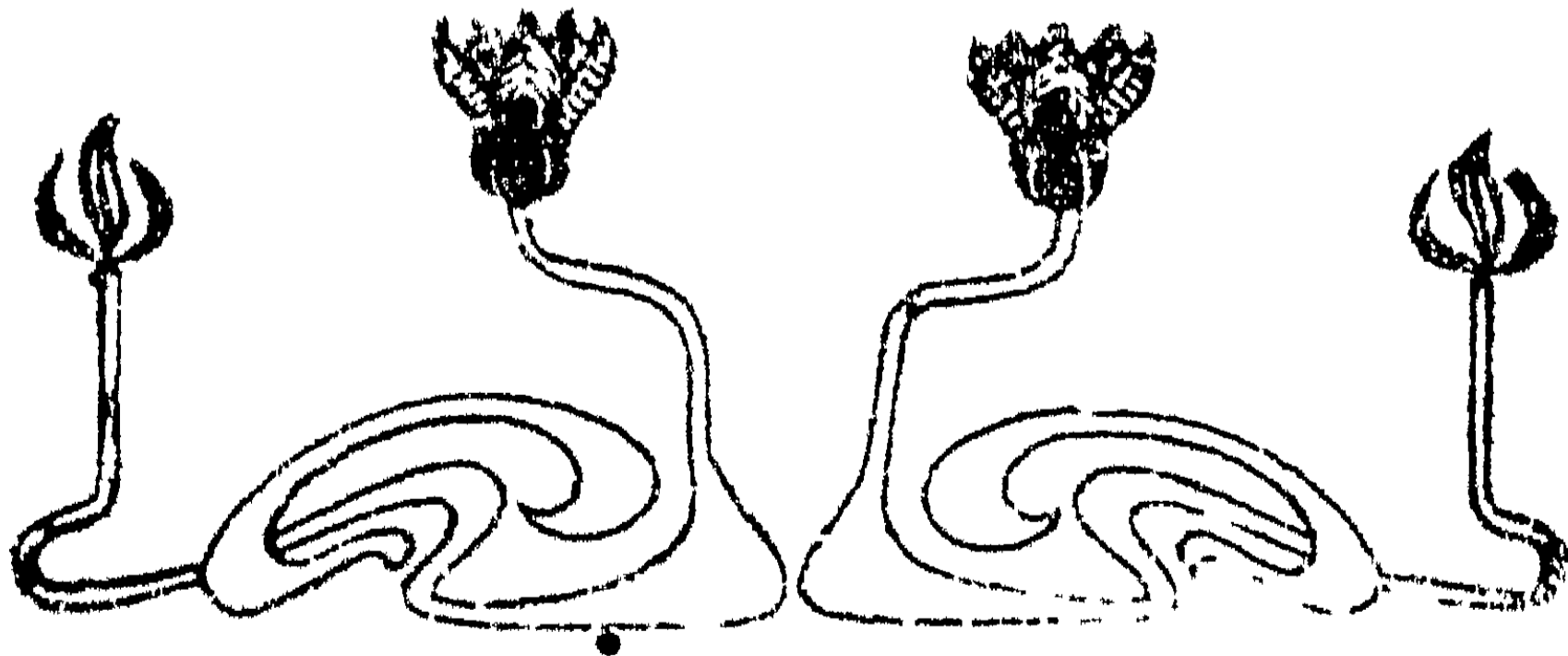
चौदहवां परिच्छेद

हृदय के आवेश में मनुष्य बहुत सी ऐसी भूलें कर बैठता है जिसका उसे अन्त में बड़ा पश्चात्ताप होता है। रतनमाला भी नूरमुहम्मद के साथ एकाएक चली आने के कारण पछता रही है। लोग सुनेंगे तो क्या कहेंगे? माता पिता क्या कहेंगे? पतिदेव किससे जल्दी खाना पकाने का आग्रह करेंगे? इत्यादि प्रश्न उसके हृदय में उठने लगे। उसने मन ही मन कहा:—क्या मैं अब इस बन्धन से निकल सकूंगी? और निकलूँगी भी तो क्या पति देव मुझे स्वीकार कर लेंगे? कैसे करेंगे? धर्म की मर्यादा का उल्लंघन नहीं कर सकते? और यदि ऐसी हिम्मत भी करेंगे तो क्या उनके माता पिता अपना स्वभाव बदल सकते हैं? जिन्होंने अपने घर में आये एक अतिथि मुसलमान को भोजन देना भी अधर्म समझा था वे मुसलमान के घर में भूल से चली आई स्त्री को वापस लेने की उदारता कहाँ से ला सकते हैं? फिर किसी से क्या गरज पड़ी है। वे तो चाहते ही थे कि किसी प्रकार मैं भग जाऊँ, वह होगया, अब वे सुख की नींद सोएँगी। उनका कटंक दूर होगया। उन्हीं के ऊपर सारा दोष क्यों मढ़ूं। मेरा भी कम दोष नहीं है। वे लाख कहते, मैं न आती? मारते पीटते फिर चुप हो जाते, शाम को पति देव आते तो कोई प्रबन्ध हो ही जाता। न कुछ होता तो पिता के पास चली जाती अब तो पिता के पास भी जाने लायक नहीं रही हूं? क्या मुँह लेकर उनके पास जाऊँगी? वे कहेंगे—

दो महीने भी ससुराल में नहीं रह सकी? आषाढ़ में ब्याह हुआ था। श्रावण और भादों सिर्फ दो ही महीने बीते हैं। कुआर का महीना आधा ही बीता है। इतने ही दिन में ऊब गई। लोग उमर की उमर जेल में बैठकर बिता देते हैं। मैं इतने दिन भी जरा सा कष्ट न झेल सकी। उस कष्ट में पवित्रता थी, जीवन की सफलता थी, मोक्ष का मार्ग खुला था, कर्त्तव्य का पालन था। नूरमुहम्मद के यहाँ का सुख उसके मुका बिले में क्या है। कुछ नहीं। मैं ने कंचन देकर काँच लिया है? हे ईश्वर रक्षा करो! बड़ी भूल हो गई है। भगवान कहाँ हो। मुझमें बळ दो यहाँ से निकल कर भाग जाऊँ यदि न भाग सकूँ तो यहीं मर जाऊँ! मेरे मरने की कहानी सुन कर माता पिता यह भूल जायँगे कि मैं ने कोई अपराध किया है? मेरी सास भी यह जान जायगी कि रतनमाला देवी थी। पढ़ी लड़कियाँ धर्म के लिये गँवारियों की अपेक्षा अधिक दृढ़ होती हैं। यह बात तभी सिद्ध होगी, जब मैं प्राण दे दूँगी? केवल अपनी प्राण रक्षा के लिये समस्त ललना कुल पर दाग न लगने दूँगी? अब मरना ही अच्छा है हे भगवान! मुझे उठा लो।

रतनमाला इसी प्रकार के विचारों में उलझी थी कि नूरमुहम्मद अपनी दादी के साथ मुस्कराता हुआ आया और बोला--चलो गाड़ी तैयार है।

रतनमाला—कहाँ चलना होगा?

नूरमुहम्मद--थोड़ी ही दूर पर एक दूसरे मुहल्ले में।

रतनमाला—क्यों?

नूरमुहम्मद—क्योंकि यहाँ खटका लगा रहेगा, सम्भव है कोई तुम्हारी खोज करने आवे?

रतनमाला—मेरी एक प्रर्थना स्वीकार करोगे?

नूरमुहम्मद—क्या ?

रतनमाला—पहले कहदो कि स्वीकार करूँगा ?

नूरमुहम्मद—कहो भी, स्वीकार क्यों नहीं करूँगा ?

रतनमाला—जरूर स्वीकार करोगे ?

नूरमुहम्मद—कहता तो हू, जरूर ?

रतनमाला—मुझे जाने दो ?

नूरमुहम्मद—कहाँ जाओगी ?

रतनमाला—अपने पिता के घर।

नूरमुहम्मद—वहाँ घुसने पाओगी ?

रतनमाला—न घुसने पाऊँगी तो तुम्हारी सेवा में आकर उपस्थित होऊँगी ?

नूरमुहम्मद—आज नहीं छोड़ सकता, कल देखा जायगा।

रतनमाला—आज क्या हुआ ?

नूरमुहम्मद—आज मुझे फुर्सत नहीं है।

रतनमाला—आपका समय तो मैं माँगती नही हूं ? मैं तो खुद ही यहाँ से निकल कर नाले के उस पार चली जाऊँगी ?

नूरमुहम्मद—ऐसा ही था तो मेरे साथ न आती ?

रतनमाला—तुम मेरे यहाँ न जाते तो मैं क्यों आती ?

नूरमुहम्मद—चाहे जितना पढ़ लें औरतों का स्वभाव नहीं जाता। हर बात में ही नहीं नहीं चिल्लाती रहती हैं।

रतनमाला—स्वभाव के चक्कर में न रहियेगा मैं न जाऊँगी।

नूरमुहम्मद—जाना होगा।

रतनमाला—नहीं जा सकती।

नूरमुहम्मद—उठा कर गाड़ी में रख दूंगा, क्या करोगी ?

रतनमाला—गाड़ी में से कूद पड़ूँगी, मर जाऊँगी, और क्या करूँगी ? बगैर स्त्री की रजामन्दी कोई उसे अपना गुलाम नहीं बना सकता।

नूरमुहम्मद—तुम्हे गुलाम कौन बनाता है ?

रतनमाला—एक अबला को इस प्रकार धमकाना क्या आप जैसे बहादुर मुसलमान को मुनासिब है ?

नूरमुहम्मद बड़ा चतुर था। उसने सोचा रतनमाला अभी जोश में है। जोश ठंडा होने पर जरूर मेरा कहना मान जायगी जो होगा देखा जायगा, जबरदस्ती तो लाया नहीं हूं। वह एक प्रकार का बनावटी गुस्सा दिखाता हुआ वहाँ से उठ कर चला गया। ईशारे से अपनी दादी को बुला कर बोला—मैं घर में बाहर से ताला बन्द करके बाहर जाता हूं, तीन चार रोज में आऊँगा। घर में और जितने आदमी हैं सब को अपने साथ लिए जाता हूं। यहीं तुम रतनमाला के साथ रहना, उसे समझाना। समझाने से मान जायगी तो अच्छा है। नहीं तो कह देना अब यह मेरे चंगुल से निकल नहीं सकती।

दादी—कहां जाओगे ?

नूरमुहम्मद—इससे क्या ? तुम घर से बाहर तो निकल ही न सकोगी मगर खिड़कियों से झांकना मत और न ऊपर की छत पर जाना। मैं चाहता हूं यदि कोई रतनमाला को तलाश करने आवे तो बन्द घर देख कर वापस लौट जाय।

दादी—बहुत अच्छा, मगर बेटा जल्दी लौटना।

बहुत अच्छा कहता हुआ नूरमुहम्मद दुमंजिले से नीचे उतरा। और बड़ी सावधानी से बाहर का दरवाज़ा बन्द करके अपनी मोटर पर जो बहुत देर से तैयार खड़ी उसका इन्तिजार कर रही थी, बैठ गया। घर के अन्य नौकर चाकर कुछ मोटर पर बैठे और कुछ पीछे खड़े इक्कों पर। उस उतने बड़े सूने सदन में दो व्यक्तियों को छोड़ कर और कोई न रह गया।

पन्द्रहवां परिच्छेद

देवधारी घर लौट कर आये तो देखा कि रतनमाला नहीं है। राजरानी ने कहा—मैं तो पहले ही कहती थी कि वह किसी पतुरिया से कम नहीं है।

देवधारी—कहाँ चली गई?

राजरानी—उसी मुसलमान के घर! और कहाँ?

देवधारी—तुम ने कुछ कहा था?

राजरानी—मुझे क्या गरज थी कि कहती।

देवधारी—आप से आप चली गई?

राजरानी—और नहीं क्या मेरे कहने से चली गई। दुलारी तो कहीं नहीं चली जाती?

देवधारी ने सोचा शायद अपने घर चली गई होगी। नूर-मुहम्मद के यहाँ क्यों जायगी। वह ऐसी नहीं है। नूरमुहम्मद उसका पड़ोसी है। उसके साथ जाना अनुचित नहीं है। गई होगी तो कल आजायगी। मगर उसे इस प्रकार जाना न चाहिये था। जाती न तो क्या करती? माता ने उसे वास्तव में बड़ा कष्ट दे रक्खा था।

उस समय देवधारी का हृदय जल से बाहर निकली मछली की तरह छटपटा रहा था। रतनमाला को पाकर वह संसार की सम्पति पा गया था। उसके बिना वह स्वप्न में सिंहासन पर बैठे हुए भिखारी की तरह जगने पर दुःखी हो रहा था। प्रयाग बहुत दूर नहीं था। उसकी इच्छा हुई थी कि उसी दिन शाम

को जाकर पता लगाने पर बैजनाथ मिश्र ने मना कर दिया। कहा—अपने पिता के यहाँ गई होगी तब तो कोई बात ही नहीं है। मुसलमान के यहाँ गई होगी तो जाने की जरूरत ही नहीं है। क्योंकि मुसलमान के घर जाने के बाद वह तुम्हारे काम की नहीं रह सकती। रात में कहाँ भटकोगे? कल दिन में जाकर इस बात का पता लगा लेना। कल हम लोग भी दशहरा देखने चलेंगे। विजयादशमी कल ही तो है।

देवधारी पिताकी बातों का प्रायः उत्तर नहीं देता था। वह चुप चाप वहाँ से चला गया और बिना कुछ खाये पिये अपने कमरे में पड़ रहा। राजरानी को इतनी भी परवाह नहीं हुई कि उसे बुला कर कम से कम खाना तो खिला दे।

देवधारी लड़कों को बहुत मेहनत से पढ़ाता था। जो लड़के चाहते थे उनको वह स्कूल बन्द होने पर भी बड़ी देर तक पढ़ाया करता था। छुट्टी के दिनों में यदि दो तीन लड़के भी पढ़ने के लिये तैयार हो जाते थे तो वह स्कूल आता था। दशहरा की में छुट्टी बारह दिन के लिये स्कूल बन्द हुआ था। पर देवधारी का स्कूल जाना नहीं बन्द हुआ था। क्योंकि चार पाँच लड़के छुट्टियों में पढ़ने के लिये आते थे। सबेरे नूरमुहम्मद से भेंट होने पर वह चाहता तो घर रह सकता था। पर यह सोच कर कि छुट्टी के दिन में खेल कूद की इच्छा दबा कर पढ़ने के लिये स्कूल आये हुए लड़कों का समय व्यर्थ नष्ट होगा, उसने नूरमुहम्मद के पास रहने की कोई परवाह न की थी। यदि वह रह जाता तो शायद यह दुर्घटना न होती। वह यह न जानता था कि छुट्टी के दिनों में बालकों को पढ़ा कर वह जो पुण्य लूट रहा है उसका फल बहुत कड़वा होगा। जानता होता तो क्यों जाता?

आदमी कितना ही दुःखी क्यों न हो प्रकृति की आज्ञा नहीं टाल सकता। भूख लगने पर उसे खाना खाना पड़ता है, प्यास लगने पर पानी पीना पड़ता है और नींद आने पर सुध बुध छोड़ कर सोना पड़ता है। भोजन की तो देवधारी ने अवहेलना करदी थी पर वह निद्रा की उपेक्षा न कर सका। सोचते सोचते उसे नींद आगई।

उसने स्वप्न में देखा कि नूरमुहम्मद रतनमाला का हाथ पकड़ कर ज़बरदस्ती अपने गले में डाल रहा है। रतनमाला छुड़ाने का यत्न कर रही है और रो रही है। वह दूर से सब देख रहा है पर एक इञ्च भी आगे नहीं बढ़ सकता। उसके पैर मानों खूँटे की तरह गड़ गए हैं। वह चिल्लाने को करता है पर चिल्ला नहीं सकता। मुँह तो खुलता है पर आवाज़ नहीं निकलती। वह बड़ा असमर्थ हो रहा है। जब स्वप्न में संकट अपनी पराकाष्ठा को पहुँच जाता है तो मनुष्य की आँखें खुल जाती हैं। देवधारी भी जाग उठा। उसने आँख फाड़ फाड़ कर चारों तरफ़ देखा। सब ओर अँधेरा था। उसे मालूम हो गया कि वह स्वप्न देख रहा था। उसने फिर सोने की चेष्टा की पर नींद न आई। रतनमाला के विषय में तरह तरह की बातें सोचते सोचते उसने सबेरा कर दिया।

सो कर उठने पर मनुष्य का हृदय जितना शान्त रहता है यदि इतना ही सदैव रहे तो वह कभी किसी का सर्वनाश करने की बात नहीं सोच सकता। सबेरे उठने पर राजरानी को अपनी भूल मालूम हुई। वह धक्का देकर न निकालती तो रतनमाला मुसलमान के साथ न जाती। वह रसोई-घर में रोटी बनाने का प्रबन्ध करती तो एक मुसलमान को उसकी बहू से बात चीत करने का मौका कैसे लगता। उसने देखा कि रतन-

माला के बिना सारा घर सूना पड़ा है। रतनमाला की वजह से घर में जो चहल पहल थी वह अब जाती रही। मनुष्य को किसी चीज़ का मूल्य तभी मालूम होता है जब वह खो जाती है। राजरानी ने भी आज रतनमाला का मूल्य जाना है। वह कैसी हँस कर बातें करती थी, कैसी चतुरता से अपने ऊपर किये गये आक्षेपों का उत्तर देती थी, कैसी धैर्यवान थी। पर अब पछताने से क्या होता है? अब रतनमाला उसकी नहीं हो सकती।

चारपाई से उठने के थोड़ी देर बाद ही उसने देवधारी से कहा—बेटा, प्रयाग जाकर पता तो ले, वह कहाँ है?

देवधारी—मुसलमान के यहाँ हुई, तो क्या तुम उसे अपने घर में वापस बुला लोगी?

राजरानी—मुसलमान के यहाँ क्यों होगी? अपने बाप के घर गई होगी।

देवधारी—वहाँ तो मैं नहीं जा सकता।

राजरानी चुप हो रही। बैजनाथ कई दिन पहले से सब को प्रयाग ले जाकर दशहरा दिखलाने की घोषणा कर चुके थे। यह सुन कर रतनमाला बहुत प्रसन्न हुई थी। पर वह यहाँ अपनी प्रसन्नता का फल पाने के लिये रहने न पाई थी। बैज-नाथ में भी वह जोश न था। दुलारी जब रोती थी तो रतनमाला उसके आँसू पोंछती थी, उसे यही चिन्ता थी कि अब उसके आँसू कौन पोंछेगा। रतनमाला गई तो लेकिन दशहरे का त्योहार फीका कर गई।

अन्त में बैजनाथ के बहुत कहने सुनने से देवधारी ग्यारह बजे खा पी कर प्रयाग के लिए रवाना हुआ।

बैजनाथ ने अपनी घोषणा वापस ले ली। दशहरा देखने न वे खुद गये न और किसी को जाने दिया। वे यह डर रहे थे कि चन्द्रशेखर से भेंट हो जायगी तो क्या कहेंगे।

देवधारी प्रयाग तो पहुँच गये पर चन्द्रशेखर के यहाँ जाने का साहस वे नहीं कर सके। वे चन्द्रशेखर से कैसे कहेंगे कि रतनमाला उनके यहाँ से चली आई है। फिर 'क्यों चली आई है' इसका वे क्या उत्तर देंगे? वे कभी चन्द्रशेखर के मकान की ओर बढ़ते और कभी लौट आते। इसी तरह चार बज गये। शहर में रामदल उठने की तैयारी होने लगी। देवधारी ने सोचा सम्भव है सब लोग रामलीला देखने गये हों।

वे उस सड़क पर आये, जिधर से होकर रामदल निकलता था। सड़क आदमियों से ठसाठस भरी थी। दोनों ओर मकान की छतें रंग विरंगी साड़ियों में मुसकुराती महिलाओं से पूर्ण थीं। देवधारी ने छतों पर अपनी दृष्टि लगा दी और इधर उधर घूमने लगे। कुछ लोगों से वे टकरा गये, कुछ ने उन्हें बुरा भला कहा, पर उन्हें क्या परवाह थी। चारों तरफ उन्होंने देख डाला पर उन्हें रतनमाला न दिखलाई पड़ी।

अन्त में जब रामदल निकलने लगा तो उनका इधर उधर घूमना बन्द हो गया। वे चिन्तित भाव से दल की शोभा देखने लगे। दल बड़ी तैयारी से निकला था। चौकियों के पीछे लाठियों की भरमार थी। मस्ताना हाथी सा झूमता झामता यह कई मील का लम्बा दल अजीब शान से गुजर रहा था। पहले लोगों को शुबह था कि रास्ते में पड़ने वाली एक मसजिद के पास झगड़ा हुए बिना न रहेगा। एक रोज पहले भी उसमें कुछ मुसलमान दंगा करने के लिये एकत्रित हुए थे। पर अधि-

कारियों ने उन्हें दबा दिया था। आज भी वह मसजिद मुसलमानों से भरी थी। पर आज उस पर पहरा था और पुलिस ने बाहर से मसजिद में ताला लगा दिया था। जब रामदल मसजिद को पार कर गया तो झगड़े की शङ्का जाती रही। कुछ लोगों ने कहा—दल देख कर मुसलमान डर गये थे। कुछ ने कहा—सरकार का इन्तजाम अच्छा था।

पर थोड़ी ही देर में दोनों बातों की परीक्षा होने लगी। दल निकल जाने पर एक गली से कुछ मुसलमान निकल कर कोठों पर से उतर कर अपने अपने घर जाने वाले स्त्री बच्चों पर टूट पड़ा। इसी समय जो मसजिद बाहर से बन्द थी उसका भी ताला खोल दिया गया। चारों तरफ मार काट मच गई। मुसलमान गुंडों ने हिन्दू स्त्रियों को बड़ी बेरहमी से पीटना और उनके गहने छीनना आरम्भ कर दिया। चारों तरफ कुहराम छा गया। मालूम नहीं कितनी औरतों को गुंडे पकड़ कर कहाँ जा छिपे। सारे शहर में आतंक छा गया। जब यह समाचार रामदल में पहुँचा और लट्ठबाज हिन्दू अपनी औरतों की रक्षा के लिये लौटे तो मुसलमान गुंडे भाग निकले। हिन्दू लट्ठबाजों ने उनका पीछा किया पर पुलिस की एक बड़ी ताकत ने उन्हें आगे बढ़ने से रोक दिया। देवधारी पहले तो भौचक्का सा इधर उधर भागता रहा। अन्त में पीछे से किसी मुसलमान ने उस पर ऐसा लट्ठ मारा कि उसका सिर खुल गया और वह चीख मार कर पृथ्वी पर गिर पड़ा।

सोलहवां परिच्छेद

——--:*:——

करीब दस बजे रात एकाएक कोलाहल होने से नूरमुहम्मद की दादी चौंक पड़ी। उसने आगे बढ़ कर देखा कि पाँच परम सुन्दरी युवतियाँ एक कोने में खड़ी हैं। और नूरमुहम्मद के साथ १५-२० मुसलमान उन्हें घेरे खड़े हैं। युवतियों को लक्ष्य करके एक मुसलमान बोला—इतने आदमी हैं। तुम पाँचो इनमें से जिसको चाहो, उसे पसन्द कर लो। उसी के साथ तुम लोगों का विवाह हो जायगा।

पाँचों युवतियों में से एक ने कहा—औरतों पर कोई हाथ नहीं उठाते। यह कोई बहादुरी नहीं है। जीते जी हममें से कोई मुसलमानी नहीं बनेगी। मर जाने पर भगवान मालिक हैं।

यह सुनकर दूर से यह दृश्य देखती हुई रतनमाला ने मन ही मन कहा—धन्य देवी! धन्य! हिन्दू स्त्रियाँ स्वभाव से ही बड़ी बहादुर होती हैं।

एक मुसलमान उस पाँचवीं युवती की ओर मुस्करा कर बोला—अगर मैं तुम्हारा मुख चूम लूँ तो क्या करोगी?

युवती क्रोध से उसकी ओर देख कर रह गई।

नूरमुहम्मद—आज इन सब को यहीं रहने दो, कल एक एक को पसन्द कर लिया जायगा। चलो देखें झगड़े का क्या हाल है? फिर वह अपनी दादी को एकान्त में बुला कर बोला—शहर में बड़ा दङ्गा हो गया है। इन सब को इसी कोठरी में बन्द

करवाये देते हैं। बाहर से मकान का ताला लगा कर जाते हैं। तुम रतनमाला से खूब होशियार रहना।

दादी—बेटा, झगड़े में मत जाओ।

नूरमुहम्मद—दूर से देखूँगा, क्या हाल है? झगड़े में काहे को पडूँगा।

नूरमुहम्मद के चले जाने पर रतनमाला ने दादी से कहा—चलो देखें ये कौन हैं?

दादी—होंगी, हमसे मतलब?

रतनमाला—तुमको दया नहीं आती? तुम भी तो हिन्दू ही के पेट से पैदा हुई हो।

दादी—दया आवे चाहे नहीं, इनको देखकर मैं क्या कर सकती हूं?

रतनमाला—तुम चाहो तो इनकी रक्षा कर सकती हो।

दादी—नहीं बेटी, बाहर से दरवाजा बन्द है।

इसी प्रकार रतनमाला से इधर उधर की बातें करते करते दादी को नींद आगई। रतनमाला ने चुपके से उठ कर दरवाजा खोला पाँचों औरतें आँखों में जल भरे बैठी थीं। रतनमाला ने कहा—बहिनो! तुम्हारी ही भाँति मैं भी इस मकान की कैदी हूं। तुम सब कहाँ की हो।

पाँचों में से एक ने कहा—सेठ मानिकचन्द को कौन नहीं जानता। इतना ही परिचय काफी है। हमारे लिये वे कुछ उठा न रक्खेंगे। गुंडों को उचित दंड तो मिलेगा ही। इसकी चिन्ता नहीं है। भय इस बात का है कि हम लोगों की पवित्रता में धब्बा न लग जाय?

इसके बाद रतनमाला ने अपना परिचय दिया। रतनमाला का नाम सुनते ही पांचों में से एक जो बहुत निर्भीक थी, कुछ हिली और बोली—तुम यहाँ कैसे ?

वह रतनमाला की सहपाठिका थी और उसे अच्छी तरह जानती थी। रतनमाला ने अपना सारा हाल कह सुनाया। पांचों में से एक ने फिर पूछा—बाहर निकलने का कोई उपाय नहीं है ?

रतनमाला—बाहर से ताला बन्द है।

इसके बाद और बहुत सी बातें हुईं। बातों ही बातों में सबेरा हो गया। दादी ने जागने पर बहुत कोशिश की कि रतन-माला उन पाँचों से अलग होकर बैठे, पर रतनमाला ने उसकी परवाह न की।

सूरज निकलने के साथ ही हिन्दुओं की एक बड़ी जमात ने नूरमुहम्मद का घर घेर लिया। मालूम नहीं लोगों को कैसे शुबह हो गया था लट्ठबाज जवानों की इच्छा हुई कि मकानों का ताला तोड़ दिया जाय। पर मानिकचन्द जल्दबाज व्यक्ति न थे। उन्होंने मजिस्ट्रेट के पास एक आदमी द्वारा लिख कर भेजा—

श्रीमन् ! मुझे शुबह है कि मेरे घर की औरतें नूरमुहम्मद के मकान में कैद हैं। मकान में बाहर से ताला बन्द है। आपसे निवेदन है कि शीघ्र ताला तुड़वा कर जाँच करें। यदि एक घंटे के भीतर आपने कोई प्रबन्ध न किया तो लाचार होकर मुझे ताला तुड़वाना पड़ेगा। मालूम नहीं हमारी स्त्रियों को क्या कष्ट दिया जा रहा है।

देखते ही देखते मजिस्ट्रेट, कोतवाल, और कितने ही और पुलीस के अफसर एक सौ हथियार बन्द सिपाहियों के साथ

पहुँचे। मकान का ताला तोड़ा गया। मानिकचन्द का शुबह ठीक निकला। उन्हें अपनी खोई हुई बहू बेटियाँ मिल गईं। रतनमाला उनकी कोई नहीं थी। उसे और दादी को पुलिस वाले अपने साथ ले जाने लगे। इस पर पांचों में से एक जो अत्यन्त निडर जान पड़ती थी रतनमाला का हाथ पकड़ कर कर बोली—इसे मैं कहीं न जाने दूँगी। यह मेरे साथ कन्या पाठशाला में पढ़ती थी।

मानिकचन्द—यह भी कल ही पकड़ी कई है क्या?

निडर स्त्री—नहीं इसे कई दिन हुए बहका लाया था।

मानिकचन्द—इसे अपने साथ न ले चलो संभव है इसके घर वाले अब इसे स्वीकार न करें?

रतनमाला ने कड़क कर कहा क्यों नहीं स्वीकार करेंगे?

मानिकचन्द—तुम यहाँ कब से हो?

रतनमाला—चाहे जब से होऊँ?

मानिकचन्द—क्या तुम्हारे पति तुम्हें क्षमा कर देंगे?

रतनमाला—क्यों नहीं क्षमा कर देंगे? उनका कहना है कि संसार में कोई ऐसा अपराध नहीं है जो क्षमा न किया जा सके।

उसी समय भीड़ में से सिर पर पट्टी बांधे एक युवक ने आगे बढ़ कर कहा—रतन! घर चलो!

यह देवधारी था।

रतनमाला ने उसके चरणों पर सिर रख दिया और वह जोर जोर से रोने लगी।

देवधारी—चलो घर चलो! उठो! यह रोने का मौका नहीं है।

रतनमाला—धन्य देवता धन्य ! आज मुझे मालूम हुआ कि पति और परमेश्वर में कोई अन्तर नहीं है। स्त्री कितनी ही पतित क्यों नहीं पति वही है जो उसे सदैव चरणों में स्थान दे। आज तुमने मुझे अपना कर अपनी विशाल क्षमाशीलता का पूर्ण परिचय दिया है। प्यारे एक बार मुख से भी कह दो—क्षमा किया।

देवधारी—तुम्हारा स्वामी होकर तुम्हीं को न क्षमा करूँगा।

रतनमाला—धन्य हैं प्राणनाथ ! पर एक बार कह भी दो क्षमा किया।

देवधारी—एक बार नहीं हजार बार कहूंगा, क्षमा किया, क्षमा किया, क्षमा किया, उठो, देर हो रही है, घर चलो।

रतनमाला—अब कभी ऐसी भूल न होगी। मर जाऊँगी पर तुम्हारे चरणों को न छोड़ूँगी।

देवधारी—ईश्वर तुम में ऐसी ही शक्ति दें ! चलो।

रतनमाला—चलो ! मेरे प्राण ! मेरे प्यारे ! मेरे सर्वस्व ! तुम्हीं मेरे सच्चे रक्षक हो ! तुम्हीं मेरे सच्चे प्रेमी हो। तुम्हीं मेरे सच्चे स्वामी हो ! चलो ! जहाँ चाहो मुझे ले चलो !!
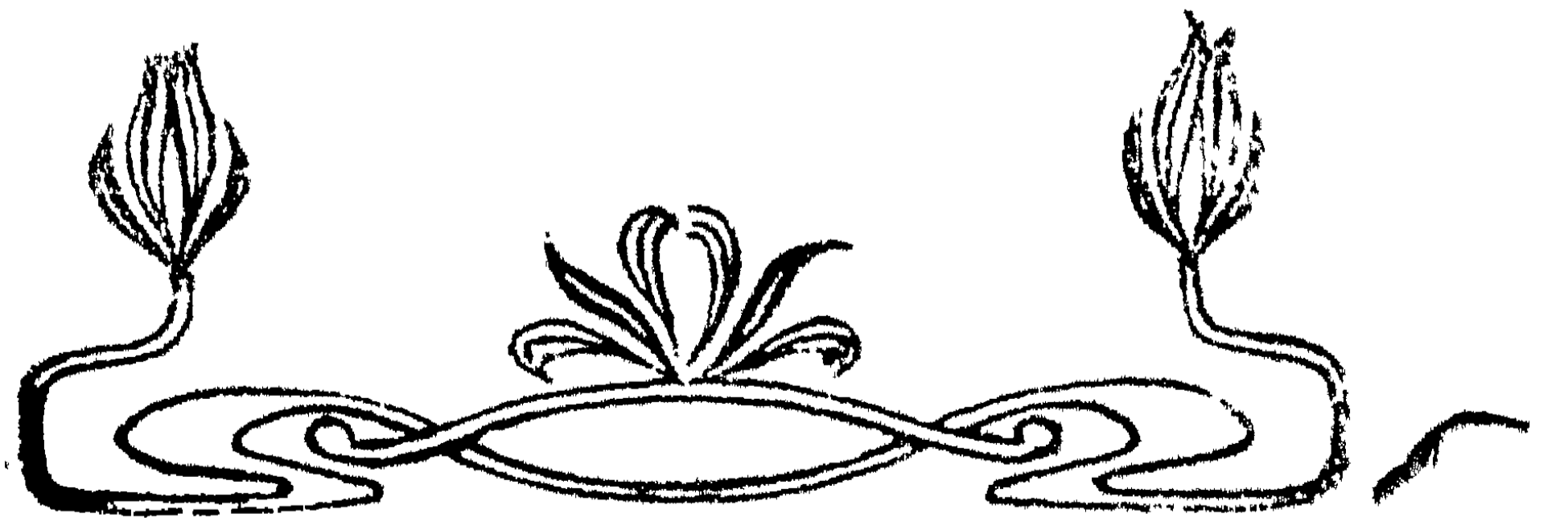
उपसंहार

नूरमुहम्मद पकड़ा गया। मुकदमे में उसकी सारी सम्पत्ति स्वाहा होगई। उसे स्वप्न में भी यह ध्यान न था कि रतनमाला को देवधारी जैसा कट्टर सनातनी क्षमा कर देगा और बिना किसी हिचकिचाहट के स्वीकार कर लेगा। अब वह हताश होगया जब रतनमाला नहीं मिली तो गुप्त समिति बना कर हिन्दुओं का नाश ही करके वह क्या करेगा? जिस काम के लिये उसने गुप्त समिति बनाई थी और गुंडों को उत्साहित किया था वह काम नहीं सिद्ध हो सका। वह मारे ग्लानि के न मालूम कहाँ भाग गया और उसका छिपा जहरीला संघ टूट गया। उसकी दादी ने भी अपने कुटीपने का दुर्व्यसन छोड़ दिया। और वह मेहनत मज़दूरी करके अपनी जीविका कमाने लगी।

राजरानी ने रतनमाला को वापस लेकर जो उदारता दिखाई वह अकथनीय है। राजरानी से ऐसी आशा किसी को नहीं थी। रतनमाला में भी एक विचित्र परिवर्त्तन होगया। वह जी जान से सास ससुर और गृह की सेवा में लग गयी। उसके सिर पर जो पश्चिमीय सभ्यता का भूत सवार था, वह उतर गया। अब वह एक आदर्श हिन्दू गृहिणी थी। अपने माता पिता को एक पत्र लिख कर उसने सूचित कर दिया था कि अब वह बड़े सुख में रहती है। देवधारी के घर में अब कोई प्राणी दुःखी या

असन्तुष्ट न था। हाँ, दुलारी अवश्य कुछ खिन्न रहा करती थी। उसे रामधारी बिलकुल प्यार न करता था। पर घर के और सब लोगों की सच्ची सहानुभूति होने के कारण दुलारी का मन बहला रहता था। जब कभी रतनमाला उससे अपनी गिरफतारी की चर्चा करती तो उसके आँखों में आँसू छलछला आते थे। और वह अधीर होकर कहती थी—ईश्वर करे तुम्हारे ही जैसे स्वामी सब को मिलें।

इति।